हम क्या खाएँ घास या माँस

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय

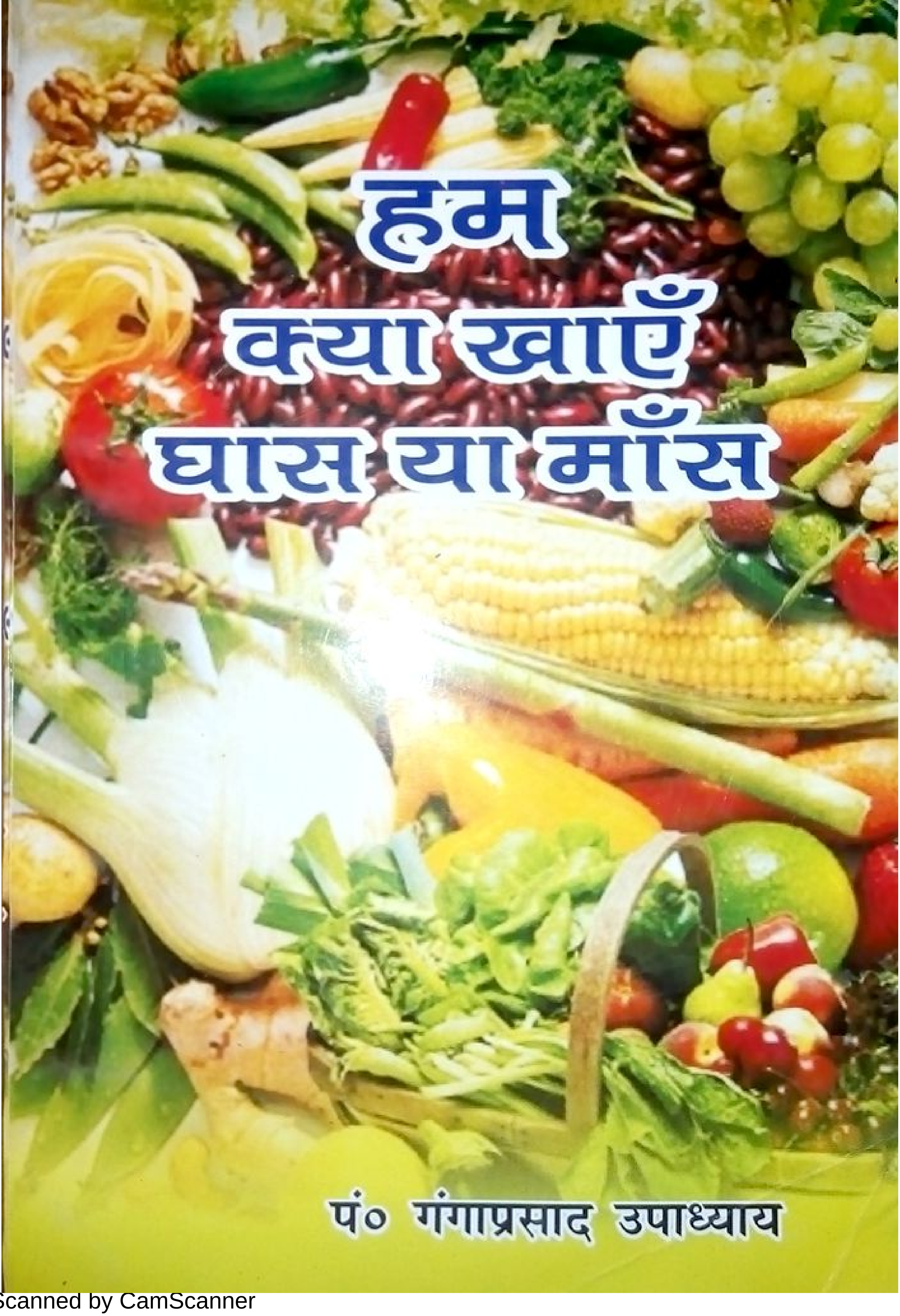

Scanned by CamScanner

॥ ओ३म् ॥

हम क्या खाएँ ?

घास या मांस

लेखक

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय

प्रकाशक

श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास

हिण्डौन सिटी (राजस्थान)

Scanned by CamScanner

पहली वार्त्ता

कौन वैजीटेरियन नहीं है?

चन्द्रदेव शर्मा—मौलवी साहेब, नमस्ते! कहिए चित्त तो प्रसन्न है? आज आपसे बहुत दिनों में भेंट हुई!

कबीर बख्श—आदाब अर्ज! पण्डितजी, आदाब अर्ज! आपकी मेहरबानी है, अल्लाह का शुक्र है। कहिए आपका मिजाज तो अच्छा है? बाल-बच्चे अच्छे हैं!

चन्द्र०—ईश्वर की दया है। कोई नई बात सुनाइए।

कबीर०—हमारे मुहल्ले में दो दिनों से कुछ लोगों में बड़ी दिलचस्प बहस चल रही है। दो पार्टियाँ हो गई हैं। एक घास पार्टी और दूसरी मांस पार्टी। कहिए पण्डितजी आप किस पार्टी में हैं?

चन्द्र०—मौलवी साहेब! साफ बात तो यह है कि न मैं घास पार्टी में हूँ न मांस पार्टी में। मुझे इन दोनों में से किसी में होना पसन्द नहीं।

कबीर०—यह कैसे?

चन्द्र०—मैं बैल नहीं कि घास खाऊँ और भेड़िया नहीं कि मांस खाऊँ। मैं तो मनुष्य हूँ और मानुषी भोजन करता हूँ। मेरी तो पार्टी ही अलग है, मैं रोटी पार्टी में हूँ, खीर पार्टी में हूँ, लड्डू पार्टी में हूँ, हलवा पार्टी में हूँ, सेब और नाशपाती पार्टी में हूँ। अङ्गूर पार्टी में और मोहनभोग पार्टी में। घास मुझसे खाई नहीं जाती और मांस से घृणा है।

कबीर०—मालूम हो गया। पण्डितजी, आप घुमा-फिरा कर बात करते हैं। आप वैजीटेरियन (Vegetarian) अर्थात् शाकपात खानेवाले हैं।

चन्द्र०—वैजीटेरियन (Vegetarian) तो आप भी हैं।

कबीर०—नहीं-नहीं। मैं तो नान-वैजीटेरियन (Non-Vegetarian) अर्थात् अ-निरामिष-भोजी हूँ।

चन्द्र०—मैंने भारतवर्ष भर में कोई नान-वैजीटेरियन नहीं देखा। शायद ग्रीनलैण्ड या अफ्रीका के अत्यन्त असभ्य प्रदेशों में कोई नान-वैजीटेरियन मिले तो मिले, परन्तु यूरोप, अमेरिका, चीन, जापान, अरब, भारतवर्ष आदि में कोई नान-वैजीटेरियन है ही नहीं।

कबीर०—पण्डितजी! ऐसी बात! आँखों में धूल! मैं साक्षात् आपके सामने खड़ा हूँ। मैं नान-वैजीटेरियन हूँ।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—नान-वैजीटेरियन (Non-Vegetarian) का क्या अर्थ है?

कबीर०—जो वैजीटेरियन न हो।

चन्द्र०—वैजीटेरियन का क्या अर्थ?

कबीर०—जो शाकाहारी हो।

चन्द्र०—क्या आप शाकाहारी नहीं? क्या आप रोटी, दाल, तरकारी, फल-फूल नहीं खाते?

कबीर०—खाता तो हूँ! परन्तु मांस भी खाता हूँ।

चन्द्र०—यह दूसरी बात है कि आप मांस भी खाते हो, परन्तु आपको शाकाहार से परहेज तो नहीं, अर्थात् आप घास पार्टी के बाहर तो नहीं। जो मैं खाता हूँ वह आप भी खाते हैं। यह दूसरी बात है कि आप कुछ और भी खाते हैं, जिसको मैं नहीं खाता, अत: मेरी बात सिद्ध है, अर्थात् संसार में कोई नान-वैजीटेरियन (अशाकाहारी) नहीं।

कबीर०—आप वैजीटेरियन (Vegetarian) और नान-वैजीटेरियन, अर्थात् शाकाहारी और अशाकाहारी का अर्थ नहीं जानते।

चन्द्र०—मौलवी साहेब, शायद यह बात मैं आपसे कहता तो अधिक उचित होती। मैंने तो इसलिए पहले आपसे अर्थ पूछ लिया था। शाक को खानेवाला अपने को अशाकाहारी (नान-वैजीटेरियन) कैसे कह सकता है? वस्तुत: मांस-भक्षी पाश्चात्य लोगों ने शाकाहार को तुच्छ दर्शाने के लिए मनुष्य जाति के दो विभाग करके एक को वैजीटेरियन और दूसरे को नान-वैजीटेरियन कह रक्खा है। यदि अर्थों की विवेचना की जाए तो यह दोनों शब्द गलत हैं, शाक-पात, फल-फूल, वनस्पति आदि तो सभी खाते हैं। लन्दन के बाजारों में लाखों टन मेवे रोज खर्च होते हैं। अरब में खुरमा विशेष भोजन समझा जाता है। जापान में अनेक प्रकार के मेवे होते हैं। भारतवर्ष तो वनस्पति की खान है और हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सभी इन फलों को शौक से खाते हैं, इसलिए यह सब वैजीटेरियन है। मैं भी वैजीटेरियन हूँ और आप भी। शाकाहार के बिना तो किसी का काम चल ही नहीं सकता। शाक तो सभी प्राणियों के आहार का मूल है। आप भी मांस पकाने में कई मसाले डालते हैं जो वृक्षों की देन है।

कबीर०—पण्डितजी! यह आप क्या कह रहे हैं। बहुत से देश हैं, जहाँ शाक उत्पन्न नहीं होता।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—मौलवी साहेब, आपने विचार नहीं किया। यदि शाक न हो तो आपको मांस मिले ही नहीं। न तो अपने शरीर का और न दूसरों के शरीर का। सिंह और भेड़िया जिन जानवरों को मार कर खाते हैं वे जानवर स्वयं शाकाहारी हैं। बकरा, भेड़, गाय तथा अन्य जानवर जो आपके खाने में आते हैं, शाकपात ही खाकर अपना मांस बनाते हैं। आप भेड़िया या शेर के मांस पर गुजर नहीं कर सकते। यदि कोई देश है जहाँ किसी प्रकार का शाक नहीं होता तो वहाँ कोई ऐसा जानवर भी न मिलेगा जिसका मांस आप खा सकें।

कबीर०—जहाँ बर्फ बहुत पड़ती है, वहाँ कौन-सा शाक होता है?

चन्द्र०—वहाँ पशु कौन से होते हैं?

कबीर०—देखिए टुण्ट्रा (Tundra) आदि उत्तरी प्रदेशों में लोग हिरण (Reindeer—रेनडियर) का मांस खाते हैं।

चन्द्र०—परन्तु हिरण क्या खाता है? क्या हिरण का मांस आकाश से बरसता है या भूमि से फूट कर निकलता है? या हिरण बर्फ खाकर रहता है? हिरण मांस तो खाता नहीं।

कबीर०—तो आप ही बताइए वह क्या खाता है?

चन्द्र०—देखिए! बरफीले स्थानों में मौस (Moss) या काई जैसी एक वनस्पति होती है, उसी को खाकर हिरण अपने को पुष्ट करता है। आप उस हिरण को खा जाते हैं। आप चाहें तो आप भी उस वनस्पति पर निर्वाह कर सकते हैं।

कबीर०—लाहौल वलाकुव्वत्! पण्डितजी आप भी कमाल करते हैं। हिरण के मजेदार गोश्त को छोड़ कर काई खिलाना चाहते हैं। तोबा! तोबा! अल्लाह का शुक्र है कि उसने बहुत से जानवर हमारे खाने के लिए पैदा कर दिये हैं और हमको खाने की इजाजत दी है।

चन्द्र०—मौलवी साहेब, यदि आप शेर से पूछें तो वह भी यही कहेगा कि अल्लाह का शुक्र है। उसने आदमी को मेरे खाने के लिए बनाया है। मैं उसको मारकर खाया करता हूँ, फिर आपको उससे क्या शिकायत हो सकती है? आप शेर को जंगली, दरिन्दा, खूँख्वार क्यों कहते हैं? यह सब लक्षण तो आप में भी पाये जाते हैं न!

कबीर०—पण्डितजी, आप कहते तो ठीक हैं, परन्तु मांस होता बड़ा मजेदार है।

चन्द्र०—मजे की क्या बात है। मुझे तो उसकी शक्ल से ही घृणा है।

Scanned by CamScanner

कबीर०—अच्छा! पण्डितजी, सोचा जायेगा। आज तो बहुत देर हो गई। घर जाना है। सलाम अलेक!

चन्द्र०—बहुत अच्छा! नमस्ते! फिर मिलेंगे। कोई अनुचित बात मुँह से निकल गई हो तो क्षमा करना।

कबीर०—नहीं! ख्यालात के तबादिले में कोई हर्ज नहीं।

दूसरी वार्त्ता

चार प्रश्न

लाला तसल्लीराम—आइये पं० चन्द्रदेव शर्माजी! कहिये मिजाज तो अच्छे हैं। कल तो आप मौलवी करीम बख्श का मगज चाट गये। बड़े जोरों से बहस की। क्या मामला था?

चन्द्र०—नमस्ते, लालाजी, नमस्ते! बात तो साधारण थी, बहस चल पड़ी।

तसल्ली०—आप लोग बहस-मुबाहिसे को बहुत पसन्द करते हैं।

चन्द्र०—लालाजी, बिना विचार किये सत्य-असत्य का निर्णय नहीं होता और सत्य-असत्य का निर्णय हुए बिना पाप-पुण्य का पता नहीं चलता। आप बाजार में हाँडी खरीदने जाते हैं तो चार दुकानों पर देखते हैं। ठोक हैं। बजाते हैं। फूटी निकलती है तो छोड़ देते हैं। परीक्षा पर पूरी उतरती है तो लेते हैं। जब दो पैसे की एक हाँडी का यह हाल है तो बिना परीक्षा के पाप-पुण्य की व्यवस्था कैसे हो सकती है? यदि हम अज्ञानवश कर्म में प्रवृत्त रहें तो ईश्वर हमको क्षमा नहीं करेगा। अतएव धर्म की बातों पर पूरी विवेचना करनी चाहिए।

तसल्ली०—अच्छा, यह बताइये कि बात क्या थी?

चन्द्र०—प्रश्न था मांस-भक्षण का। मौलवी साहेब अपने को नान-वैजीटेरियन (अशाकाहारी) कहते थे। मैंने कहा, यह गलत है। आप सभी तो शाकाहारी हैं।

तसल्ली०—यह झगड़ा व्यर्थ का है। मांस खाने में दोष ही क्या है? क्या आप मांस नहीं खाते? दूध पीते हो या नहीं? दूध क्या है? मांस से ही दूध बनता है। दूध क्या पेड़ पर लगता है?

चन्द्र०—वाह लालाजी, वाह! क्या दूध और मांस एक है? आपने

Scanned by CamScanner

अपनी माता का दूध पिया है। क्या आप कह सकते हैं कि आपने अपनी माता का मांस खाया है? आप मांस और दूध में विवेचना नहीं कर सकते। बकरी का बच्चा अपनी माता का दूध पीता है। क्या वह उसका मांस खाता है? गाय का बछड़ा अपनी माता का दूध पीता है। क्या वह उसका मांस खाता है? आप सब गाय का दूध पीते हैं। गोमांस से तो आपको भी घृणा है। क्या आप गोमांस को महापाप नहीं समझते?

तसल्ली०—समझता तो हूँ, परन्तु क्या दूध मांस से नहीं बनता?

चन्द्र०—नहीं। मांस और दूध एक नहीं, परमात्मा स्त्री जाति के प्राणियों में उनकी सन्तान की सम्वृद्धि के लिए उसी भोजन का सूक्ष्म रूप दूध उत्पन्न कर देता है, जिससे बच्चों का शरीर पुष्ट रहे। माँ अपने बच्चे को खुशी-खुशी दूध पिलाती है। गोश्त तो नहीं खिलाती। यदि बच्चा दाँत निकालने की अवस्था में माँ की छाती काट लेता है तो माँ मारती है। दूध पिलाने में माता को कष्ट नहीं होता। मांस तो बिना पीड़ा दिये मिलता ही नहीं। सभी प्राणी अपनी माँ का दूध पीते हैं, परन्तु कोई माँ का मांस नहीं खाता। इसलिए मांस की दूध से तुलना करना सर्वथा भ्रान्ति-मूलक है।

तसल्ली०—मैंने मान लिया, परन्तु हिंसा का अड़बङ्गा लगाना व्यर्थ है। बिना हिंसा के हमारा जीवन ही असम्भव है। सुना नहीं कि जीव का आहार जीव है।

चन्द्र०—वह लोकोक्ति किसी आप जैसे मांसाहारी की गढ़ी हुई है। हर एक अपने स्वार्थ की बात गढ़ लेता है। यदि इसका अर्थ यह लिया जाए कि प्रत्येक जीव अपने जीवन के लिए दूसरे जीवों का आश्रय लेता है तो ठीक है, परन्तु यह बात ठीक नहीं कि प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन की स्थिति के लिए दूसरे प्राणियों की हत्या किया करे।

तसल्ली०—देखिये! छोटी मछली को बड़ी मछली खा जाती है। बड़ी मछली को बड़े-बड़े मगर मत्स्य चट कर जाते हैं। चूहों को बिल्ली खा जाती है। छिपकली सैकड़ों पतङ्गों का चर्बण कर जाती है। कुदरत हमको यही सबक सिखलाती है कि बड़ा जीव छोटे जीवों को मार कर खा लेता है। मनुष्य सबसे बड़ा जीव होने के कारण यदि सबको खा ले तो कोई आश्चर्य नहीं। ईश्वर ने सब जीव हमारी खुराक के लिए बनाये हैं।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—लालाजी! शेर मनुष्य को भी खा लेता है। इससे तो शेर ही सबसे बड़ा सिद्ध हुआ। मनुष्य नहीं। मनुष्य अवश्य सब प्राणियों में उत्तम है, परन्तु अपनी निर्दयता के कारण नहीं, अपितु अपनी विद्या, बुद्धि, दया और सभ्यता के कारण। कुछ जंगली जातियाँ मनुष्य को मार कर भी खा जाती हैं। आप उनको अपने से उत्तम नहीं कहते। मनुष्यों में जो मनुष्य अत्यन्त क्रूर होता है, उसे सब बुरा कहते हैं। दयावान की सभी प्रशंसा करते हैं। आपका हृदय भी इसी बात की साक्षी देता होगा। क्रूरता मनुष्य का गुण नहीं, अपितु अवगुण है। अतएव क्रूर और जंगली पशुओं का अनुकरण करना अथवा उनका दृष्टान्त देना सर्वथा अनुचित है। संस्कृत की कहावत है '**महाजनो येन गतः स पन्थाः**' यह कहीं नहीं कहा कि '**हिंसक जीवो येन गतः स पन्थाः**'। मार्ग वही है जिस पर बड़े आदमी चलें, न कि हिंसक जीव! शेर, चीता, भेड़िया, मगर, मछली, कुत्ता, बिल्ली हमारे गुरु नहीं। न हमको उनकी नकल करना चाहिए। संसार में इतने चोर डाकू हैं। क्या आप उनको अपना आदर्श मानेंगे? सभ्य जातियों का काम है कि असभ्य और क्रूर व्यवहार छोड़कर संसार भर को दया का पाठ पढ़ावें और अपने जीवन से दर्शा देवें कि दया धर्म का मूल है और निर्दयता पाप का। बिना निर्दयता के किसी को किसी का मांस नहीं मिल सकता, इसलिए मांस खाना ठीक नहीं। कहा भी है कि '**अहिंसा परमो धर्मः**' अर्थात् हिंसा परम अधर्म है।

तसल्ली०—पण्डितजी, वृक्षों में भी तो जीव है, फिर आप उनको क्यों खाते हैं? जैसे आप गाजर, मूली खा जाते हैं, हम बकरों को भी खा जाते हैं।

चन्द्र०—लालाजी! आपने यहाँ एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित कर दिया। इसकी विवेचना होनी चाहिए। मांस-भक्षण के प्रश्न को लोग हँसी में टाल देते हैं। वस्तुतः इसके साथ कई दार्शनिक और आयुर्वेदिक प्रश्नों का सम्बन्ध है।

तसल्ली०—आपने ठीक कहा पण्डितजी! एक-एक पर पूरी बहस होनी चाहिए, आज की आपकी बहस से मुझ पर यह प्रभाव पड़ा है कि मैं भी इस मामले की तह तक पहुँचना चाहता हूँ। आप बताइये कि इसके साथ कौन-कौन से प्रश्नों का सम्बन्ध है।

चन्द्र०—लालाजी! कई प्रश्न हैं। उनकी अलग-अलग विवेचना

Scanned by CamScanner

होनी चाहिए और फिर उनकी संगति लगानी चाहिए। पहला प्रश्न यह है कि जीव के लक्षण क्या हैं?

तसल्ली०—ठीक।

चन्द्र०—दूसरा यह कि कौन पदार्थ सजीव हैं, कौन निर्जीव?

तसल्ली०—मान लिया?

चन्द्र०—तीसरा प्रश्न यह है कि मनुष्य को किस-किस जीव को कितनी-कितनी पीड़ा देने का अधिकार है और किस-किस दशा में, अर्थात् अहिंसा धर्म की मर्यादा क्या है?

तसल्ली०—यह भी मञ्जूर!

चन्द्र०—चौथा प्रश्न यह है कि जड़ पदार्थों में भी मनुष्यों को क्या खाना चाहिए और क्या नहीं, क्योंकि किसी पदार्थ को केवल निर्जीव सिद्ध कर देने से ही उसका भक्ष्य होना सिद्ध नहीं हो जाता। रेत जड़ है, परन्तु उसे कोई नहीं खाता। पत्थर या लोहे को चबाने से किसी की हिंसा नहीं होती, परन्तु न पत्थर भक्ष्य है, न लोहा। हलवा भक्ष्य है, परन्तु चोरी का हलवा अभक्ष्य है और उसका खानेवाला दण्डनीय होता है। भोजन में तीन बातें होनी चाहिएँ—

१. उसकी उपलब्धि पाप से तो नहीं होती?

२. कानून के विरुद्ध तो नहीं है?

३. स्वास्थ्य के लिए हानिकारक तो नहीं है?

तसल्ली०—पण्डितजी, आपने ठीक कहा। कल से यहीं आकर इन बातों पर विचार किया जायेगा, मैं अपने अन्य मित्रों को भी सूचना दे दूँगा। कल आठ बजे प्रात:काल इसी पार्क में आ जाया करें और नित्य नौ बजे तक इसी पर वार्त्तालाप हुआ करे। आज की मजलिस बन्द। नमस्ते।

चन्द्र०—नमस्ते। मिलेंगे।

✿

तीसरी वार्त्ता

जीव के लक्षण

लाला तसल्लीराम—पं० चन्द्रदेवजी, नमस्ते!

चन्द्र०—नमस्ते, लालाजी, चित्त प्रसन्न है?

तसल्ली०—दया है। लीजिये आज विचार आरम्भ कीजिये, मैं

Scanned by CamScanner

आज कई मित्रों को लाया हूँ। मौलवी कबीर बख्श भी है और सेठ लल्लूमल भी, पण्डित रामशरण भी और ठाकुर अभ्युदय सिंह जी भी।

चन्द्र०—अच्छा है! आइये विचार आरम्भ हो। आप सब यह तो जानते ही हैं कि प्रश्न क्या है? बात यहाँ से चली है कि मांस खाना चाहिए या नहीं। यह है मुख्य प्रश्न। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए चार और प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है।

सेठ लल्लूमल—भाई हम प्रश्न-वश्न तो जानते नहीं। एक बात जानते हैं कि किसी बिचारे की जान लेना अच्छा नहीं।

ठाकुर अभ्युदय सिंह—सेठजी ऐसा क्यों कहते हो? हम तो बकरा ही मारकर खाते हैं, आप तो आदमियों को चटकर जाते हैं। एक बार जिसने आपसे कर्ज ले लिया उसकी सात पीढ़ी आपके ब्याज के बोझ से सिसक-सिसक मर जाती है, क्या यह हिंसा नहीं है?

सेठ०—ब्याज और बकरे के वध में भेद है। हम किसी के घर उधार देने जाते हैं? जब दस बार गरज पड़ती है तो लोग नाक रगड़ते हैं। खुशामद करते हैं, तभी हम उधार देते हैं। क्या हम आपसे रुपये की ब्याज भी न लें। आप अपने मकान का किराया लेते हैं या नहीं। खेत लगान पर उठाते हैं या नहीं? और यदि कोई मकान का किराया या लगान न चुकावे तो उस पर नालिश करते हैं या नहीं? जो उधार लेकर देना नहीं जानता वही तो ब्याज के पञ्जे में फँसता है। जो हमारा ऋण समय पर चुका देता है, उसको तो कष्ट नहीं होता।

चन्द्र०—देखिये लालाजी! इस प्रकार तो बात का बतङ्गड़ हो जायेगा और किसी परिणाम पर नहीं पहुँचेंगे। आयु भर वाद-प्रतिवाद होता रहे। लाभ क्या? कल लाला तसल्लीरामजी से यह निश्चित हुआ था कि एक-एक प्रश्न पर अलग-अलग बातचीत होगी। आज तो केवल एक ही प्रश्न पर विचार होना है कि जीव क्या है? इसकी विवेचना के पश्चात् यह निश्चित हो सकेगा कि सजीव कौन है? और निर्जीव कौन?

कबीर०—पण्डितजी आप ठीक कहते हैं। सीढ़ी-सीढ़ी चढ़ना चाहिए। कई सवालों को मिला देने से गड़बड़ हो जाती है। हमारे यहाँ दो तरह के जानदार माने गये हैं। एक हैवान नातिक अर्थात् बोलनेवाला प्राणी जैसे मनुष्य और दूसरा हैवान मुतलक जैसे—बैल, गाय, परन्दा। अगर्चि बैल, गाय जानदार हैं तो भी उसमें रूह (जीव)

Scanned by CamScanner

नहीं है। इन्सान (आदमी) में रूह है।

पं० रामशरणजी—(आश्चर्य से) क्या आप बकरा, भेड़, कुत्ते बिल्ली में रूह नहीं मानते?

कबीर०—नहीं।

राम—तो मरने के पीछे इनका क्या होता है?

कबीर०—कुछ नहीं। इनकी जिन्दगी यहीं खत्म हो जाती है।

राम०—तो क्या वे स्वर्ग या नरक को नहीं जाते?

कबीर०—जाये कौन? उनमें रूह ही नहीं तो दोजख और बहिश्त का सवाल ही नहीं उठता।

राम०—तभी आप इनको मारने में पाप नहीं गिनते।

कबीर०—ठीक कहा! यह तो खुदा ने हमारे खाने के लिए ही बनाये हैं। पण्डितजी, क्या आप समझते हैं कि बकरा भी नरक या स्वर्ग में जाता है?

राम०—हम तो यह मानते हैं कि मरने के पश्चात् जीव किसी भी योनि में जा सकता है। जैसे उसके कर्म होंगे वैसी ही योनि मिलेगी।

कबीर०—हम पुनर्जन्म नहीं मानते।

चन्द्र०—फिर हम अपने विषय से बाहर होते जा रहे हैं। विषय यह था कि जीव क्या है? मौलवी साहेब! आप ही बतावें। चाहे कोई हैवान नातिक हो चाहे हैवान मुतलक, है तो हैवान अर्थात् जीवधारी। अब देखना चाहिए कि उसको हैवान क्यों कहते हैं, उसमें हैवान के क्या गुण हैं? कुत्ता हैवान (सजीव) है और ईंट बेजान चीज है। कौन-सा लक्ष्ण है जो कुत्ते को हैवान और ईंट को बेजान बताता है?

कबीर०—इस बात को तो अल्लाह ही जानता है। खुदा की बातें खुदा ही जाने। हम बन्दों को क्या ताब कि उसके राज (रहस्य) को समझ सकें।

चन्द्र०—मौलवी साहेब हर एक बात को आप अल्लाह पर तो नहीं छोड़ सकते। अल्लाह ने बुद्धि दी है, उसको लगाना हमारा काम है। कल्पना कीजिए कि हम एक अज्ञात और अपरिचित टापू में जाते हैं, वहाँ कोई ऐसा विचित्र जन्तु मिलता है, जिसको हमने कभी नहीं देखा न आपकी कुरान शरीफ में उसका उल्लेख है। आप कैसे मालूम

Scanned by CamScanner

करेंगे कि वह जानदार है या बेजान।

कबीर०—यह जानना कौन मुश्किल है? उसके हरकात सकनात (चाल-ढाल) से पता चल जाता है कि यह जानदार है और यह बेजान।

चन्द्र०—फिर उसको अल्लाह पर क्यों छोड़ते हैं? उन्हीं हरकात सकनात को देखिए। जीव के लक्षण मालूम हो जायेंगे। हमारे शास्त्र में जीव के छः चिह्न लिखे हैं—

सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, ज्ञान।

जिसमें यह छः चीजें पाई जाएँ वह जीव है, कुत्ते, बिल्ली, बकरी, गाय, मछली, कीड़े, मकौड़े इन सब में ऐसी गति पाई जाती है, जिससे पता चलता है कि उनमें सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, ज्ञान और प्रयत्न हैं। इसलिए हम उनको सजीव कहते हैं।

कबीर०—तो क्या उनमें वही रूह है जो आदमी में है?

चन्द्र०—लक्षणों से तो यही प्रतीत होता है। यों तो आदमियों में भी भिन्न-भिन्न अवस्थाओं की बुद्धि होती है। जंगली लोग बुद्धि-हीन होते हैं और सभ्य लोगों को ज्ञान होता है, परन्तु ज्ञान तो है ही। कुत्ते, बिल्ली अपने स्वामी को पहचानते और उसका बुद्धिपूर्वक कार्य करते हैं। उनमें विवेक है। यहाँ तक कि छोटे-छोटे कीड़ों तक में विवेक है। बिना विवेक के वह कार्य नहीं कर सकते। चीटियों की बुद्धि को देख कर आश्चर्य होता है। इसी प्रकार बहुत छोटे जन्तु भी हैं, जिनकी गति हमको खाली आँख से दिखाई नहीं पड़ती, परन्तु उनमें गति है अवश्य और ज्ञान भी है।

ठा०अभ्यु०—बात तो ठीक है। मौलवी साहेब आपको भी मान लेना चहिए कि जानवरों में तमीज (विवेक-बुद्धि) होती है। यदि कोई बैल या भैंसे को मारने लगता है तो आप भी कहते हैं—"कैसा बेरहम कसाई है। इसको दया नहीं आती।" इससे प्रतीत होता है कि आपका मन भी यही गवाही देता है कि जानवरों में रूह है। आप अपने घोड़े को पुचकारते हैं और वह प्यार से आपको देखकर हिनहिनाता है। यही तो बुद्धि का लक्षण है।

कबीर०—बुद्धि तो है पर रूह नहीं। ऐसी रूह नहीं, जिसको इनसानी रूह कह सकें।

चन्द्र०—इसका क्या अर्थ? यह तो बड़ी भौंडी बात हुई। जब लक्षण मिल गये तो रूह मानने में क्या कसर रह गई? आपकी कुरान

Scanned by CamScanner

में लिखा है कि खुदा ने कुछ दुष्टों को दण्ड देकर उनकी शकल मसख (विकृत) कर दी और बन्दर एवं सुअर बना दिया।[१] इससे स्पष्ट है कि बन्दरों में रूह है।

सेठ०—हाँ, हमने मान लिया कि जानवरों में जीव है और उनको सुख-दुःख उसी प्रकार होता है, जैसे मनुष्य को।

ठा० अभ्यु०—इतना तो हम भी मानते हैं, परन्तु सुख-दुःख से क्या होता है? बिना किसी को दुःख दिये हम गुजारा नहीं कर सकते।

चन्द्र०—इस प्रश्न को फिर उठावेंगे। आज तो केवल यही देखना है कि जीव के लक्षण क्या हैं? जिस बेंच पर हम लोग बैठे हैं, वह जड़ (निर्जीव) है, चेतन नहीं। वह गाय जो आपके सामने उस खेत में चर रही है चेतन है, जड़ नहीं। बेंच पर आप क्रोध करें। उसको आँखें दिखाएँ, उस पर चिल्लाएँ। वह टस से मस नहीं होती। गाय की ओर लाठी दिखाइये वह भागने का यत्न करेगी। जब कुत्ता खरगोश के पीछे दौड़ता है तो खरगोश जान बचाने के लिए अनेक यत्न करता है। यह दूसरी बात है कि सफल हो या न हो, अतः सिद्ध है कि इन पशुओं में जीव है। किसी कवि ने कहा है—

आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।

अर्थात् खाना, सोना, डरना और स्त्री-पुरुष का संयोग यह मनुष्यों और जानवरों में एक-सा पाया जाता है।

लाला तसल्ली०—पण्डितजी, आज इतना विचार हो गया। हम सबको माननीय है। अब घर चलिये। नोन-तेल की फिकिर भी तो करनी है। नहीं तो घरवाली कोसेगी कि कहाँ गप्प लड़ाते रहे। कल फिर इस स्थान पर विचार होगा। आप सब भी आइयेगा।

कबीर०—जरूर! जरूर बहस दिलचस्प है। मैं भी सोचूँगा और अपने दोस्तों से भी मश्वरा करूँगा। सादी साहेब ने लिखा है कि इल्म बेबहस बेकार है। हमको जरूर इन मसलों (विषयों) पर गौर (विचार) करना चाहिये।[२]

---

१. देखो कुरान शरीफ सूरा वकर आयत ''जअला मिनहुमुल किरदत्ता बल खनाजीरा।''

२. जीव के अस्तित्व और गुण का पूर्ण विवेचन मैंने अपनी पुस्तक ''जीवात्मा'' में किया है।

Scanned by CamScanner

चौथी वार्त्ता

अहिंसा का प्रश्न

कबीर०—ठाकुर अभ्युदय सिंह साहेब! आदाब अर्ज।

ठा०—आदाब अर्ज, आदाब अर्ज! अब सब लोग आते जा रहे हैं, विचार शुरु हो।

कबीर०—जरूर! जरूर! पं० चन्द्रदेव शुरु करें। हाँ! पं० साहेब, आज क्या रहेगा?

चन्द्र०—कल हमने जीव के लक्षणों पर विचार किया था, अर्थात् जहाँ सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, ज्ञान और प्रयत्न छः चीजें पाई जाएँ वहाँ समझना चाहिए कि जीव है। आज हमको यह विचार करना है कि हिंसा क्या है और अहिंसा का पालन हम कहाँ तक कर सकते हैं।

ठा० अभ्यु०—अच्छा एक बात तो बताइये। नीम के दरख्त में जीव है या नहीं।

पं०—ठाकुर साहेब, अभी इस बात को न छेड़िये। इस प्रश्न को भी पीछे से लेवेंगे। शनैः-शनैः हर बात पर विचार होना चाहिए। हमारी इच्छा है कि मांस-भक्षण के विषय में जितने प्रश्न उठ सकते हैं, उन सभी पर विचार किया जाए।

ला० तस०—हाँ! होना तो ऐसा ही चाहिए। अच्छा पं० जी! बताइये अहिंसा क्या है? आजकल महात्मागाँधीजी के प्रताप से अहिंसा की चर्चा हर जगह हुआ करती है। अहिंसा क्या बला है? गाँधीजी कहते थे कि किसी को पीड़ा न दो। यहाँ बिना पीड़ा दिये काम ही नहीं चलता। जब तक लड़के को दो चपत नहीं लगाते वह मदरसे नहीं जाता। क्या उसको बेमुहार छोड़ देवे।

चन्द्र०—लालाजी, गाँधीजी का यह अभिप्राय नहीं कि उचित दण्ड न दो।

ला० तस०—उचित हो या अनुचित! पीड़ा तो होगी। हिंसा हुई या नहीं।

कबीर०—ठीक! ठीक! हिंसा तो हो गई। अब बताइये पण्डित साहेब, इसका क्या जवाब है?

चन्द्र०—ठहरिये! ठहरिये! उतावले क्यों होते हैं। जवाब सुनिये। शास्त्र ने हर बात का सन्तोषजनक उत्तर दिया है। '**अहिंसा वैरत्यागः**'।

Scanned by CamScanner

वैर अर्थात् शत्रुता को छोड़ना अहिंसा है, अर्थात् हमको किसी से वैर नहीं रखना चाहिए।

कबीर०—'किसी से' का क्या मतलब? इन्सान से या हैवान से।

चन्द्र०—दोनों से। प्राणी मात्र से। पशु हो या पक्षी हो या मनुष्य। यजुर्वेद में उपदेश है कि—

मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।

मित्र की दृष्टि से सब प्राणियों को देखना चाहिए। यहाँ शब्द है 'सर्वाणि भूतानि' अर्थात् 'सब प्राणी'। केवल मनुष्य की विशेषता नहीं।

सेठ लल्लूमल—मान लिया, परन्तु पीड़ा देने का प्रश्न तो बना ही रहा।

चन्द्र०—स्पष्ट तो हो गया। जब हमने वैर त्याग दिया तो हम किसी प्राणी को न पीड़ा देंगे और न पीड़े देने देंगे। यही है अहिंसा।

कबीर०—अच्छा! यह बताइये। लड़का शरारत करे तो उसको पीटा जाए? आप तो हिंसा ही हिंसा चिल्लाते रहेंगे। बिल्ली दूध पीने आवे तो उसे मारें या उसके सामने दूध का बर्तन खोलकर रख दें। आपका 'अहिंसा' शासतर क्या बखान करता है।

चन्द्र०—मौलवी साहेब! हमारे शास्त्र और आपके शास्त्र का प्रश्न नहीं है। **हम आप दोनों मनुष्य हैं। मनुष्यमात्र का आचार शास्त्र एक है। इसमें भेद नहीं। झूठ को आप भी पाप गिनते हैं और हम भी।** हम ईश्वर को दयालु कहते हैं और आप 'रहीम'। जब खुदा रहीम है तो हमको भी रहम करना चाहिए। रहम ही अहिंसा है। हिंसा रहम की उलटी है। कोई हिंसक रहीम नहीं हो सकता और जो रहीम होना चाहे उसे हिंसा से बचना होगा। झूठ बोलकर कोई सत्यवादी नहीं रह सकता। अहिंसा तो आचार शास्त्र का आधार है। झूठ बोलना क्यों पाप है? इसलिए कि झूठ बोला ही जाता है, किसी को धोखा देने या उसको हानि पहुँचाने के लिए। इसी प्रकार चोरी को पाप इसलिए कहते हैं कि जिसकी चोरी की जाती है, उसको पीड़ा पहुँचती है। जिस वस्तु को ले लेने से उसके मालिक को पीड़ा न पहुँचे, उसके चोरी नहीं कहते। जैसे यदि मेरे बाग से सुगन्ध उड़ रही हो और आप उसको सूँघ लें तो यह चोरी नहीं है, क्योंकि आपके सुगन्ध सूँघने से मेरी या बाग की कोई क्षति नहीं होती है, इसी प्रकार व्यभिचार का हाल है, इसीलिए तो कहा है कि '**अहिंसा परमो धर्मः**'

Scanned by CamScanner

अब आपने बालक या बिल्ली के विषय में जो प्रश्न किया है, उस पर विचार होना चाहिए।

ठा० अभ्यु०—हाँ पण्डितजी, बताइये बिल्ली को मारें या न मारें?

चन्द्र०—पहले तो नियम पर जाइये। संस्कृत की लोकोक्ति है कि **'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति'** अर्थात् **जो पीड़ा अपना कर्त्तव्य और दूसरे का हित समझ कर शास्त्र ने विधि के अन्तर्गत रक्खी है, वह हिंसा नहीं है।** इस लोकोक्ति का भ्रान्तिपूर्ण अर्थ लेते हैं। वह समझते हैं कि यज्ञ में यदि पशु को मारा जाए तो यह 'वैदिकी हिंसा' है और इससे हिंसा का पाप नहीं लगता। वस्तुतः यह भूल है। इसका तात्पर्य तो यह है कि प्राणियों की रक्षार्थ जगत् के हित को दृष्टि में रखते हुए आचार शास्त्र और शासन शास्त्र में जिस पीड़ा देने को मनुष्य का कर्त्तव्य बताया गया है, वह पीड़ा हिंसा नहीं समझी जाती।

सेठ० लल्लू०—पण्डितजी आगे व्याख्यान कीजिये।

पं० राम—पण्डित चन्द्रदेवजी आपने तो **''वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति''** की अनोखी व्याख्या की। हमने तो अब तक यही सुन रक्खा था कि यज्ञ में पशु-वध वैदिकी हिंसा होने के कारण पाप नहीं है, इसलिए हमने बड़े-बड़े पण्डितों को सुना है कि वह यज्ञ के समय बकरे को बड़ी क्रूरता से मारते हैं।

चन्द्र०—पण्डितजी, हम यज्ञ और पशु-वध का प्रश्न पीछे से लेंगे। मैंने जो व्याख्या की है, वह युक्ति-युक्त है या नहीं?

सेठ० लल्लू०—हाँ। ठीक तो प्रतीत होती है। जी को लगती है। भला यज्ञ में पशु को मारना भी कोई धर्म है? क्या यज्ञ के समय मारने में पीड़ा नहीं होती। अच्छा पण्डितजी, आगे चलिए।

चन्द्र०—देखिये! यदि कोई अधिकृत पुरुष किसी मनुष्य या अन्य प्राणी को इसलिए पीड़ा देता है कि इससे उस प्राणी का हित होता हो तो यह हिंसा नहीं है। माता-पिता को अधिकार है कि वह अपनी सन्तान की भलाई के हित उनको उचित दण्ड देवें। औचित्य की सीमा पर अवश्य ध्यान देना होगा, जो माँ-बाप अपने बच्चों को मोहवश दण्ड नहीं देते वह उनके शत्रु हैं और इसलिए हिंसक।

इसी प्रकार डाक्टर को अधिकार है कि विशेष अवस्थाओं में रोगी के हित को दृष्टि में रखकर उसके परिवार की उचित अनुमति प्राप्त करके रोगी के शरीर में चीड़ा-फाड़ी करे, परन्तु इसमें स्वार्थ न

Scanned by CamScanner

होना चाहिए। फोड़े को चीरने में पीड़ा तो होती है, परन्तु यह हिंसा नहीं है, क्योंकि डाक्टर को अधिकार है। यह भी वैदिकी हिंसा है और इसलिए पाप नहीं।

राजा को अधिकार है कि चोर या डाकू को कारागार में डाल दे, क्योंकि दण्ड न देने से वह दूसरों को व्यर्थ पीड़ा पहुँचाते हैं। हिंसा का रोकना भी अहिंसा है। राज-दण्ड को हम "वैदिकी हिंसा" कहते हैं, क्योंकि पीड़ा तो है, परन्तु जगत् के भले के लिए।

इसी प्रकार भेड़िये आदि क्रूर और हिंसक जन्तुओं को मारकर लोगों की भलाई करना क्षत्रिय का काम है। वह हिंसा में शामिल नहीं है, अपितु उसके न करने में हिंसा है, जो राजा चोर डाकुओं को दण्ड नहीं देता या जिसके देश में सिंह, भेड़िये आदि खुल्लम-खुल्ला मनुष्यों को खा जाते हैं, वह राजा हिंसक और पापी है।

किसी सीमा तक और विशेष अवस्थाओं में प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि दूसरे मनुष्य या पशु को मार दे। उसकी आज्ञा धर्मशास्त्र भी देता है और राज का कानून भी। जैसे यदि आप देखते हैं कि किसी जंगल में कोई मनुष्य किसी स्त्री के सतीत्व पर आक्रमण करना चाहता है और आप बिना उसे मारे उस स्त्री की रक्षा नहीं कर सकते तो आप उसको गोली से मार सकते हैं, क्योंकि आपका अभिप्राय स्त्री की रक्षा करना है न कि स्वार्थसिद्ध करना। इसी प्रकार यदि कोई पागल कुत्ता किसी पुरुष की जान लेना चाहता है तो उसके मार देने में कोई पाप नहीं।

इसी प्रकार बिल्ली के आक्रमणों से अपने दूध की रक्षा करना आपका अधिकार है, आप दूध अपने लिए खरीदते हैं, बिल्ली के लिए नहीं।

मैंने यह तीन-चार मोटे उदाहरण दिये हैं। इन्हीं नियमों को सर्वत्र फैलाया जा सकता है। यह नियम प्रायः सभी बातों पर लागू हो सकते हैं, यदि बाल की खाल न निकाली जाए! युद्ध में मारना भी इसी कोटि के अन्तर्गत है।

कबीर०—हम भी तो भूख निवारण के लिए बकरे को मारते हैं। इससे लाखों मनुष्यों का उपकार होता है।

चन्द्र०—मौलवी साहेब! इसमें भेद है। कोई भेड़िये या शेर का गोश्त नहीं खाता। खाने के लिए तो बिचारे निरपराध प्राणियों के ही

Scanned by CamScanner

गले कटते हैं। यह उपकार नहीं। स्वार्थ है और स्वार्थ भी मूर्खता का। प्राणियों की जान जाए और मनुष्य जाति की हानि हो। देखिए स्वामी दयानन्द ने इस विषय में क्या कहा है—

जिसमें उपकारक प्राणियों की हिंसा, अर्थात् जैसे एक गाय के शरीर से दूध, घी, बैल, गाय उत्पन्न होने से एक पीढ़ी में चार लाख पछहत्तर सहस्त्र छ: सौ मनुष्यों को सुख पहुँचाता है, वैसे पशुओं को न मारें न मारने दें। जैसे किसी गाय के बीस सेर और किसी गाय से दो सेर दूध प्रतिदिन होवे, उसका मध्य भाग ग्यारह सेर प्रत्येक गाय से दूध होता है। कोई गाय अठारह और कोई छ: महीने तक दूध देती है, उसका भी मध्य भाग बारह महीने हुए। अब प्रत्येक गाय के जन्म भर के दूध से १४९६० (चौबीस सहस्र नौ सौ साठ) मनुष्य एक बार में तृप्त हो सकते हैं। उसके छ: बछियाँ, छ: बछड़े होते हैं। उनमें से दो मर जाए तो भी दस रहें। उनमें से पाँच बछड़ियों के जन्म भर के दूध को मिलाकर १२४८०० (एक लाख चौबीस हजार आठ सौ) मनुष्य तृप्त हो सकते हैं। अब रहे पाँच बैल। वे जन्म भर ५००० (पाँच सहस्र) मन अन्न न्यून से न्यून उत्पन्न कर सकते हैं। उस अन्न में से प्रत्येक मनुष्य तीन पाव खावे तो अढ़ाई लाख मनुष्यों की तृप्ति होती है। दूध और अन्न मिला के एक गाय की एक पीढ़ी में ४७५६०० (चार लाख पचहत्तर सहस्र छ: सौ) मनुष्य एक बार पालित होते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ा कर लेखा करें तो असंख्यात मनुष्यों का पालन होता है। इससे भिन्न गाड़ी सवारी, भार उठाने आदि कर्मों से मनुष्यों के बड़े उपकारक होते हैं तथा भैंस दूध में अधिक उपकारक होती हैं, परन्तु जैसे बैल उपकारक होते वैसे भैंसे भी हैं, परन्तु गाय के दूध घी से जितने बुद्धि-वृद्धि से लाभ होते हैं, उतने भैंस के दूध से नहीं। इससे मुख्योपकारक आर्यों ने गाय को गिना है और जो कोई अन्य विद्वान् होगा वह भी इसी प्रकार समझेगा। बकरी के दूध से २५९२० (पच्चीस सहस्र नौ सौ बीस) आदमियों का पालन होता है। वैसे हाथी, घोड़ा, ऊँट, भेड़, गदहे आदि से भी बड़े उपकार होते हैं। इन पशुओं को मारनेवालों को सब मनुष्यों की हत्या करनेवाला जानियेगा।

(सत्यार्थप्रकाश, समुल्लास १०)

सेठ लल्लूमल—यह हिसाब तो बड़ो चोखो रहो। कैसी बड़ी बात कही है। अब कहिये मौलवी साहेब! आपने समझा!

Scanned by CamScanner

कबीर०—बात तो ठीक है। मेरी समझ में आती है। देखो पहले एक रुपये का तीस सेर दूध बिकता था। अब पशुओं के मर जाने से एक रुपये सेर भी नहीं मिलता। बच्चे एक-एक बूँध दूध को तरस गये। स्वामी दयानन्द ठीक कहते हैं। मैं मानता हूँ और हर एक दानिशमन्द आदमी तसलीम करेगा।

ला० तसल्लीराम—पं० जी अब समय अधिक हो गया है। यह बहस आज ही तो खतम नहीं होगी। अब कल।

चन्द्र०—बहुत अच्छा, धन्यवाद! नमस्ते, नमस्ते। कल मिलेंगे।

✿

पाँचवी वार्त्ता

मनुजी के आठ कसाई

ला० तसल्लीराम—पं० चन्द्रदेवजी! आपकी कल की युक्तियों से तो यही सिद्ध होता है कि मांस नहीं खाना चाहिए, क्योंकि बिना जीवों को हानि पहुँचाये मांस मिल नहीं सकता।

पं० चन्द्र०—ठीक लालाजी! यही तो बात है कि हम लोग मांस का निषेध करते हैं। मांस खानेवालों ने संसार को कसाईखाना बना रक्खा है, हर शहर में हजारों बकरे, हजारों भेड़ें, हजारों गाय-बैल नित्य प्रति नियमानुसार छुरी की धार के शिकार हो जाते हैं। इन लाखों और करोड़ों बेजबान और सामर्थ्यहीन जन्तुओं का पीड़ाजनित करुणोत्पादक आक्रन्दन संसार की शान्ति में कितनी भयानक अशान्ति उत्पन्न करता है। आपके पैर में एक काँटा लग जाए तो कितना चिल्लाते हैं। आपके लड़के या भाई के सुई से घाव हो जाए तो कितनी हाय-हाय होती है? समस्त घर कम्पायमान हो जाता है? थोड़ी-सी कल्पना शक्ति को काम में लाइये और यहीं बैठे-बैठे उस दृश्य पर दृष्टि दौड़ाइये कि नित्य बूचड़खानों में लाखों प्राणी कसाई की छुरी से काटे जाते हैं, क्यों? क्या उन्होंने कोई अपराध किया है? नहीं? केवल इसलिए कि हमारा विकृत स्वाद उनके मांस को खाये बिना तृप्ति प्राप्त नहीं कर सकता। इतने पशुओं की रोने की आवाज वायुमण्डल में गूँजती हुई हमारी आत्माओं को कलुषित नहीं करती? हे मनुष्य जाति! तू तो सर्वोत्कृष्ट होने का दावा करती है। तुझमें बुद्धि है। पाप-पुण्य का विवेक है, फिर भी तू ऐसी क्रूर बनी हुई है कि तूने अपने पेट भरने के लिए बूचड़खाने बना रक्खे हैं। यदि कोई एक

Scanned by CamScanner

व्यक्ति व्यक्तिगत पाप करे तो करे, उसे दण्ड दिया जा सकता है, परन्तु जब समस्त मानवी जगत् स्वार्थ में फँसकर इतने प्राणियों का नियमित रूप से बिना अपराध के संहार किया करे तो मनुष्य से बढ़कर और कौन-सी जाति है, जिसके सामने इन बिचारों की अपील हो सके।

ठा० अभ्यु०—पं० जी, हम मांस जरूर खाते हैं, पर मारते नहीं। कसाई दे जाता है। इससे उसकी रोजी चलती है। उसका तो पेशा है। हम मारें तो हमको हिंसा का पाप लगे। हम मारते ही नहीं, फिर इसमें हमारा क्या दोष। यदि हम लोग मांस न खरीदें तो कसाई लोगों की गुजर कैसे हो?

चन्द्र०—वाह ठाकुर साहेब? आप अपने बुरे कर्मों से इस प्रकार बचना चाहते हैं। क्या आपने किसी कसाई से पूछा है?

कबीर०—नूर मुहम्मद! नूर मुहम्मद! यहाँ आओ, तुम भले आ गये। एक बहस हो रही है। उसमें तुम्हारी गवाही की जरूरत है।

नूर मुह०—मौलवी साहब क्या बात है?

कबीर०—अपना मांस का टोकरा जमीन पर रख दो और सामने की बेंच पर बैठ जाओ। आज एक बात का फैसला करना है।

अभ्यु०—यह कौन हैं?

कबीर०—यह कसाई हैं, गोश्त बेचने जा रहे हैं।

नूर मुह०—क्या सवाल है? क्या गोश्त चाहिये? मैं पहुँचा सकता हूँ।

कबीर०—ठाकुर साहब कहते हैं कि हम तो गोश्त कसाइयों से मोल लेकर खाते हैं। इसके मारने का गुनाह हमारे सिर पर नहीं है। यह गुनाह कसाइयों के सिर पर है।

नूर मुह०—हरगिज नहीं। हम तो ठाकुर साहेब के लिए मारते हैं। हमारा इसमें क्या गुनाह है? यदि लोग न लेवें और न खावें तो हम क्यों मारें? देखिए, कल लाला चिरञ्जी लाल ने हुक्म दिया था कि हमारे घर लड़के का मुण्डन है। दावत होगी, दोस्त रिश्तेदार जुड़ेंगे, इसलिए नौजवान बकरे के बच्चे का ताजा नरम-नरम गोश्त चाहिए, इसलिए आज मैंने उनके लिए खास तौर से बकरों के बच्चे तलाश किये और उनका गोश्त लाया हूँ। अगर वह हुक्म न देते तो मैं क्यों मारता? ठाकुर साहेब! हम तो आपके बवरची हैं। जैसा आप चाहते हैं हम करते हैं। इसमें हमको कोई गुनाह नहीं।

सेठ ल०—यह तो खूब रही! खानेवाला कहता है कि कसाई को

Scanned by CamScanner

पाप लगता है और कसाई कहता है कि खानेवालों को। विचारे बकरे की तो जान जाती है और हर एक अपने अपराध को दूसरों के सिर थोपता है। क्या न्याय है?

चन्द्र०—बात तो यह है कि दोनों ही अपराधी हैं और खानेवाले का अपराध अधिक है, क्योंकि उसी के लिए मारा जाता है। यदि मांस खाना बन्द हो जाए तो जीवों को मारना बन्द हो जाए। कसाइयों की जाति ही न रहें। कितनी गजब की बात है कि इन खानेवालों ने मनुष्य की जाति के एक विशेष भाग को कसाई बनाकर उनके जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों को बिगाड़ दिया। यह कसाई प्रात:काल नित्य ईश्वर का नाम लेकर सैंकड़ों जानवरों को हलाल करते हैं और इनको दया नहीं आती। दया मनुष्य का विशेष गुण है। दयाहीन मनुष्य मनुष्य नहीं, दरिन्दा है। इन कसाइयों को मांसाहारी लोगों ने ऐसा पेशा दिया हुआ है कि इन बिचारों के संस्कार ही खराब कर दिये हैं। इनके मन का शीशा इतना धुन्धला हो गया है कि दया की किरणें इस पर प्रभाव ही नहीं डाल सकतीं। मुझे इन कसाइयों को देख कर दया आती है कि इन बिचारों को दूसरों की जबान के चटखारे के लिए इतनी जानें रोज मारनी पड़ती हैं। क्यों नूर मुहम्मद! सच-सच बताओ! क्या तुमको कभी इस पर पश्चात्ताप होता है? यह तो तुम भी मानते हो कि अल्लाह रहीम है, रहमान है। यदि तुम किसी पर दया करोगे तो अल्लाह भी तुम पर दया करेगा। यदि तुम बेरहमी करोगे तो अल्लाह तुम्हारे साथ भी बेरहमी करेगा।

नूर० मुह०—पण्डित साहेब आप ठीक फरमाते हैं। मगर क्या करें? हमारी तो आदत हो गई। बचपन से यही करते चले आते हैं। रोज घर से जानवरों को पुचकार-पुचकार कर ले जाना और जिबह करके उनको सिर पर लाद लाना और आप लोगों के हाथ बेच देना। मैंने तो आज तक कभी सोचा ही नहीं कि पाप क्या है और पुण्य क्या है? लेकिन आज आपके कहने से मेरी आँखें कुछ खुलती जाती हैं। दुनियाँ में इतने पेशे पड़े हैं। खुदा ने बनाया है। खुदा रिजक (रोटी) देगा। हम दूसरे के लिए इतनी जानों का अजाब अपने सिर क्यों लें। अच्छा अब तो मुझे जाने दीजिए। लाला चिरञ्जीलाल इन्तजार करते होंगे।

चन्द्र०—देखा आपने। मनु महाराज ने ठीक लिखा है—

Scanned by CamScanner

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः॥

(मनु० ५।५१)

अनुमति देनेवाला, अङ्गों को काटनेवाला, मारनेवाला, मोल लेनेवाला, बेचनेवाला, पकानेवाला, परोसनेवाला, खानेवाला, यह आठों घातक हैं और इन सबको पाप लगता है।[1]

इसलिए ठाकुर साहेब को चाहिए कि मांस खाना छोड़ दें और नूर मुहम्मद को चाहिए कि मारना और बेचना बन्द कर देवें। एक का पाप दूसरे के सिर मँढ़ने से काम नहीं चलने का। ईश्वर सबको देखता है।

सेठ लल्लू०—पण्डितजी आप ठीक कहते हैं और मनुजी महाराज के सामने किसकी चल सकती है। मनुजी तो हमारे कानून के सबसे पहले प्रवर्त्तक थे। उन्होंने जो कुछ कहा ठीक ही कहा। जो पाप मिलकर किया जाता है, उसमें तो सभी का दोष है, जो उसमें शामिल होते हैं।

नूर मुह०—आप हमारी रोजी लेना चाहते हैं।

चन्द्र०—हम आपकी रोजी लेना नहीं चाहते। बकरों और भेड़ों की जान बचाना चाहते हैं। आपको उस गुनाह अजीम (घोर पाप) से बचाना चाहते हैं, जो आपकी गर्दन पर बिना जाने लादा जा रहा है। अल्लाह रहीम है। उसके बन्दों को भी रहीम होना चाहिए।

---

१. **जैनियों ने ९ कोटियाँ की हैं—**

१. स्वयं हननम्—स्वयं मारना।
२. अन्येन घातनं—दूसरे से मरवाना।
३. अपरेण हन्यमानस्यानुमोदनम्—दूसरा मारे तो उसका अनुमोदन करना।
४. स्वयं पचनम्—स्वयं पकाना।
५. अन्येन पाचनम्—दूसरे से पकवाना।
६. अपरेण पाच्यमानस्यानुमोदनम्—दूसरे से पकवाने का अनुमोदन करना।
७. स्वयं क्रयणम्—खरीदना।
८. अन्येन क्रायणम्—दूसरे से खरिदवाना।
९. अपरेण क्रीयमाणस्यानुमोदनम्—दूसरे से खरिदवाने का अनुमोदन करना।

(मलयागिरि आचार्यकृत पिण्डनिर्युक्ति विवृति, उद्गम द्वार गाथा ४०२—स्याद्वाद्व मञ्जरी, पृष्ठ ८८ से)

Scanned by CamScanner

नूर मुह०—अल्लाह रहीम हैं तो हमारे ऊपर रहम करेगा।

चन्द्र०—आप उसके रहम के योग्य हो ही नहीं सकते, अगर आप दूसरों पर रहम नहीं करते। दूसरों की गर्दन पर छुरी फेरनेवाला कैसे आशा रख सकता है कि उसके ऊपर ईश्वर दया करे। बबूल का बीज बोने से आम का फल नहीं हो सकता। रहा रोजी का सवाल! सभी तो कसाई नहीं है। वे भी तो किसी न किसी प्रकार अपनी जीविका प्राप्त करते हैं। आप भी वैसा ही करेंगे। चोर-डाकू और लुटेरे कहने लगें कि यदि हम अपना पेशा छोड़ दें तो क्या खाएँ तो आप उनको क्या परामर्श देंगे?

नूर मुह०—तो क्या हम चोर-डाकू हैं?

चन्द्र०—हम यह नहीं कहते। हम तो मिसाल देते हैं। चोर तो केवल माल ही चुराते हैं। आप खुले बाजार इतने प्राणियों की रोज हत्या करते हैं! यह दूसरी बात है कि बकरे और भेड़ें बेजबान हैं। बोल नहीं सकते और मनुष्यों ने आपको आज्ञा दे रक्खी है। सच बताना, नूरे मियाँ! तुम तेज छुरी से बकरों को मारते हो तो क्या उनको पीड़ा नहीं होती?

नूर मुह०—होती तो है। बकरा छटपटाता है। भागने का यत्न करता है, परन्तु वह तो हमारे बस में होता है।

चन्द्र०—क्या आपको तरस नहीं आता! सच कहना। कलेजे पर हाथ रख कर कहना। ईश्वर को साक्षी मानकर कहना। तुम भी बाल-बच्चेदार हो। तुम्हारे भीतर भी दिल है।

नूर० मुह०—पण्डितजी, आता तो जरूर है, मगर क्या करें। एक रोजी का ख्याल और दूसरे आदत। अच्छा अब मुझे इजाजत दीजिए। देर हो रही है।

चन्द्र०—अच्छा! हम सब चलते हैं। आज की सभा समाप्त! नमस्ते!

सब—नमस्ते, नमस्ते!

✿

छठी वार्त्ता

वृक्षों में जीव

ला० तसल्ली राम—पं० चन्द्रदेवजी! आज मैं ऐसी दलील लाया

Scanned by CamScanner

हूँ कि आपको चुप होना पड़ेगा। आप कई दिन से अहिंसा की दुहाई देकर हमको लज्जित कर रहे हैं, परन्तु कहावत है कि मनुष्य अपनी आँख का शहतीर नहीं देख सकता और दूसरे की आंख का तिल देख लेता है। यदि हम हिंसा के पापी हैं तो आप भी।

चन्द्र०—कैसे! लालाजी बताइये तो सही! हम भी तो सुनें।

तस०—देखिये। यदि हम बकरा खाते हैं तो आप भी सागपात खाते हैं। तरबूज का गूदा तो गोश्त की ही शक्ल रखता है। आप उसे गप कर जाते हैं। फलों को तोड़-तोड़ कर खा जाते हैं। आपका चाकू लौकी, कद्दू, बैगन, कटहल की गर्दन पर चलता ही रहता है। मूली पर आपको दया नहीं आती। गाजर को आप कच्चा ही खा जाते हैं। जहाँ गन्ने का पेड़ देखा आपका जी ललचाया। मटर की फलियों पर तो आप ऐसे टूटते हैं, जैसे बिल्ली चूहों पर। कहिये इन सब में जान है या नहीं। बिचारे आम के पेड़ का पेट न चीरा जाए तो आपके मकान के दरवाजे और आल्मारियाँ कैसे बनें? यदि शीशम पर कुल्हाड़ा न चलाया जाए तो आपकी छत कैसे पटे? सागून के वृक्ष की हत्या करके ही तो आपको बैठने की कुर्सी मिली है। बबूल की डालियाँ काटकर ही तो आप दातौन करते हैं। अब बताइये मांस-भक्षियों और आप में क्या भेद हैं?

कबीर०—हाँ पण्डितजी अब बताइये। आज तो मुँह की खानी पड़ेगी।

थे बहुत दिन से शेखजी शेखी बघारते।
लो आज उनकी शेखी गई दो घड़ी के बाद॥

चन्द्र०—मौलवी साहेब आप इतना क्यों उछलते हैं? जो भेड़, बकरी, कुत्ते और बिल्ली में रूह नहीं मानते वह हम शाक खानेवालों को पापी कैसे कह सकते हैं?

तस०—हम तो मानते हैं। जैसे बकरी में रूह है वैसे आम और जामुन में।

चन्द्र०—और वैसी ही मनुष्यों में?

तस०—हाँ? वैसी ही मनुष्य में! एक योनि मनुष्य है। दूसरी योनि कुत्ते-बिल्ली। तीसरी योनि वृक्ष, लता आदि।

राम०—हाँ। पण्डितजी! यह योनियाँ तो अवश्य हैं। इनको स्थावर योनि कहा है, परन्तु हैं यह स्थावर योनियाँ, अर्थात् चलती-फिरती

Scanned by CamScanner

नहीं। यह सुषुप्ति अवस्था में हैं। इनको सुख-दुःख का भान नहीं होता। जैसे गहरी नींद में सोनेवाले को या क्लोरोफार्म के नशे में पड़े हुए को कोई दुःख नहीं होता, इसी प्रकार वृक्षों को भी काटने से कोई कष्ट नहीं होता।

कबीर०—अगर हम क्लोरोफार्म देकर बकरों और गायों को मारा करें तो आपको ऐतराज तो न होगा? क्योंकि वह तकलीफ से बच जाएँगी। यूरोप में बिजली के जरिये से जानवर जिवह किये जाते हैं। मिनट भर में सैकड़ों मार दिये जाते हैं। अगर हम किसी सोते आदमी को मार दें तो पाप होगा या नहीं?

राम०—पाप अवश्य होगा, क्योंकि आपने उसकी जान ले ली। आपको जान लेने का क्या अधिकार था?

कबीर०—आपने भी आम तोड़ा या नहीं?

राम०—आम तोड़ने से वृक्ष मरता तो नहीं। यदि हम आपके नाखून या बाल काटकर काम में ले आवें तो यह हत्या तो नहीं है। इसी प्रकार यदि नारङ्गी तोड़कर खा ली तो क्या हानि?

कबीर०—अजी साहेब आप तो मूली और गाजर को पूरा-पूरा खा जाते हैं। उन विचारों की जिन्दगी का नाम निशान भी नहीं छोड़ते।

तस०—पं० रामशरणजी आपकी सुषुप्ति-अवस्था की युक्ति तो अपील नहीं करती। यदि सुषुप्ति अवस्था में कोई किसी को मार दे तो अवश्य ही दण्ड का भागी होगा। पं० चन्द्रदेवजी, आप क्यों चुप हैं? बोलिये—

चन्द्र०—मैं आप लोगों का तमाशा देख रहा था। लाला तसल्लीराम ने आज वृक्षों की वकालत में समस्त काव्य-कला समाप्त कर दी। कैसी लच्छेदार भाषा में कैसी मनोहर युक्तियां दी हैं। मैं आपके इस उद्योग की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। साधुवाद! साधुवाद! परन्तु यह बताइये कि यह युक्तियाँ वृक्षों की रक्षार्थ दी गई हैं या पशु घातकों की सफाई में!

तस०—मैं समझा नहीं।

चन्द्र०—मैं समझाता हूँ। समिझये। युक्तियाँ देने का एक उद्देश्य होता है? वृक्षों में जीव सिद्ध करके क्या आप यह चाहते हैं कि दया के वशीभूत होकर हम वृक्षों को भी खाना छोड़ देवें। या आप मांसाहारियों की निर्दयता के लिए एक बहाना ढूँढ़कर यह कहना

Scanned by CamScanner

चाहते हैं कि यदि वृक्ष पर क्रूरता करना पाप नहीं तो पशुओं पर क्रूरता करना क्यों पाप है? जान तो दोनों में है।

तस०—इस पेचदार प्रश्न से आपका क्या अभिप्राय है? पण्डितजी बड़े चतुर हैं। अब उत्तर न आने पर मुझे चक्कर में डालते हैं। मैंने तो बात कह दी कि वृक्षों में जान है। आप मानिये या इनकार कीजिये। इस प्रश्न से मेरा क्या प्रयोजन सिद्ध होगा, इसको क्यों बताऊँ। क्या युक्तियाँ प्रयोजन को दृष्टि में रखकर दी जाती हैं?

चन्द्र०—नहीं। लालाजी! अभी फूलिये नहीं। मैं आपकी एक एक युक्ति का उत्तर दूँगा, परन्तु पहले मैं टटोलना चाहता हूँ कि आप अपनी युक्तियों और सिद्धान्तों के अनुकूल कहाँ तक आचरण स्वीकार करने के लिए उद्यत हैं।

तस०—क्या मतलब?

चन्द्र०—मतलब यह कि या तो मानिये कि हिंसा करना पाप नहीं। यह हुई पहली अवस्था! यदि इस अवस्था पर कार्य किया जाए तो पाप और पुण्य का प्रश्न ही उठ जाए, जिसकी लाठी उसकी भैंस! आप में शक्ति हो तो आप किसी मनुष्य या पशु को मार कर खा जाएँ। कुछ पाप नहीं। हिंसा का प्रश्न ही नहीं रहा। शक्ति का प्रश्न रह गया। विधि वही है, जिसको करने में कोई आपको दण्ड न दे सके। समरथ को नहीं दोष गोसाईं। क्या आप इस सिद्धान्त को मानते हैं? क्या आप अच्छा समझते हैं कि इस सिद्धान्त का प्रचार किया जाए?

तस०—नहीं नहीं। ऐसा नहीं मान सकते!

कबीर०—तोबा तोबा। कहीं ऐसा हो सकता है! फिर तो गजब हो जायेगा! किसी बिचारे गरीब की जान न बच सकेगी! हम सब दरिन्दे हो जायेंगे। एक-दूसरे को कच्चा खा जायेगा। हमारी तहजीब (सभ्यता) और मर्दुमखोर जंगलियों की तहजीब में क्या फर्क रहेगा?

चन्द्र०—ठीक! ठीक! मैं समझता हूँ कि आपके सिर में दिमाग है और पहलू में दिल है। आप कभी ऐसी बात नहीं मान सकते।

कबीर०—कभी नहीं।

चन्द्र०—दूसरी अवस्था यह है कि आप कहें कि वृक्षों में जान है, अतः इन पर दया करनी चाहिए और इनको खाना नहीं चाहिए?

रामशरण—यह कठिन है, फिर जीवन निर्वाह कैसे होगा?

सेठ लल्लू०—सूखा अनाज खाने में तो दोष नहीं। उसमें तो जान

Scanned by CamScanner

नहीं है। यदि वृक्ष से स्वयं ही फल गिर पड़े तो खा लेवें!

तस०—यदि कोई बकरा स्वयं ही मर जाए तो उसे खा लेवें! यही न।

चन्द्र०—घबराइये नहीं! जल्दी क्यों करते हैं? तीसरी अवस्था यह है कि हमारी युक्ति शृङ्खला इस प्रकार चले—

वृक्ष में जान है और हम उनको खाते हैं।

इसी प्रकार पशुओं में भी जान है। उनके खाने में कोई दोष नहीं होना चाहिए।

ठा० अभ्युदय०—ठीक यही बात है?

चन्द्र०—तो एक पग आगे भी बढ़ना होगा, अर्थात् जिस प्रकार वृक्षों और पशुओं में जान है, परन्तु इनका खाना दोष नहीं। इसी प्रकार मनुष्यों में जान है, परन्तु उनका खाना भी दोष नहीं।

तस०—इस स्थिति को कोई मनुष्य सहन न करेगा। क्या हम मर्दुमखोर हैं?

चन्द्र०—मैं यह नहीं कहता! मेरा कहना तो यह है कि जिस मनोवृत्ति को लेकर आप चल रहे हैं, वह बड़ी भयानक है। उससे मनुष्य, मनुष्य पर दया नहीं कर सकता। यह दूसरी बात है कि दण्ड अथवा प्रतिक्रिया के डर से वह चुप बैठा रहे। यह सभ्यता तो नहीं है?

सेठ लल्लूमल—तो इस समस्या का क्या समाधान है? यदि हम चाहें भी तो बिना शाकाहार के जीविका नहीं रह सकती। मनुष्य धूल फांक कर जीवित नहीं रह सकता। ईश्वर ने हमको ऐसी परिस्थिति में क्यों डाला कि जानबूझ कर हिंसा करनी पड़े?

चन्द्र०—इसमें ईश्वर का कोई दोष नहीं। हमारा ही दोष हैं। मैंने पहले ही आपसे कहा था किसी चीज को सजीव सिद्ध करने से पूर्व जीव के लक्षणों पर विचार कर लीजिये। **''लक्षण प्रमाणाभ्यां वस्तु सिद्धिः।''** यदि वृक्षों में जीव के लक्षण मिलें तो उनको सजीव कहिये। भेड़-बकरी में तो जीव के लक्षण मिलते हैं, इसलिए हम कहते हैं कि वे जानदार हैं? वृक्षों में तो कोई लक्षण नहीं मिलते!

राम०—तो क्या वृक्षों में जीव नहीं।

चन्द्र०—मैं तो नहीं मानता।

राम०—फिर स्थावर योनि का क्या अर्थ।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—स्थावर योनि नहीं। सृष्टि के दो भेद किये गये हैं—चर और अचर, स्थावर और जंगम, जगतस्तस्थुषश्च![१] (यजुर्वेद) यहाँ वृक्षों में सजीव होने का प्रश्न नहीं।

कबीर०—यह बात कुछ लगती तो है। हमारे यहाँ मखलूकात (सृष्टि) के तीन तबके बताये गये हैं, हैवानात् (सजीव), नबातात (वनस्पति) और जमादात (पत्थर आदि) यह तबके हैं। जानदारों की किस्में नहीं। अंग्रेजी में इनको किंगडम (Kingdom) कहते हैं—एनीमल किंगडम (Animal Kingdom) वैजीटेबिल किंगडम (Vegitable Kingdom) और मिनरल किंगडम (Mineral Kingdom)। इसका सिर्फ यह मतलब है कि दुनिया में तीन तरह की चीजें पाई जाती हैं, हैवानात जिसमें आदमी भी शामिल हैं, दरख्त वगैरह: और पत्थर मिट्टी वगैरह।

तस०—तो जीव के क्या लक्षण हैं?

चन्द्र०—वही छः अर्थात् सुख, दु:ख, इच्छा, द्वेष प्रयत्न और ज्ञान।

तस०—कैसे पहचान हो?

चन्द्र०—पहचान तो आप नित्य करते हैं। एक अत्यन्त सुन्दर और बोलता हुआ खिलौने का कुत्ता लाया जाए। आप तुरन्त पहचान लेंगे कि यह कुत्ता वास्तविक नहीं, बनावटी है। उसकी क्रियाएँ ही ऐसी होती हैं कि यह झट ज्ञात हो जाता है कि इसमें ज्ञान नहीं है और इससे सुख और दु:ख तथा इच्छा और द्वेष का प्रकाश नहीं होता है।

राम०—वृक्ष खाते-पीते हैं। इनको खाद चाहिए और पानी।

चन्द्र०—रेल का इंजिन भी कोयला खाता है और पानी पीता है

---

१. स्वामी दयानन्द के भाष्य में इस प्रकार लिखा है—

क. 'जगती जङ्गमस्य, तस्थुष: स्थावरस्य च पति: स्वामी।'
अर्थात् परमात्मा चेतन और जड़ दोनों प्रकार की चीजों का स्वामी है? (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ब्रह्मविद्या विषय में)।

ख. (जगत:) जङ्गमस्य, (तस्थुष:) स्थावरस्य च। यहाँ भी वही अर्थ हैं। (ऋ० १।६।१५।५ का भाष्य) देखिये भूमिका, भाष्य तथा आर्याभिविनय।

ग. ऋग्वेद १।७।१२।५ 'यो विश्वस्य जगत:' का अर्थ देखिये। जो सब जगत् (स्थावर) जड़ अप्राणी और प्राणत:, चेतनावाले जगत् को। (आर्य्याभिविनय:)
यहाँ स्थावर को अप्राणी और जड़ बताया।

Scanned by CamScanner

और बोलता भी है। क्या यह सजीव है?

राम०—वृक्ष बढ़ता घटता है।

चन्द्र०—बढ़ना घटना जीव का लक्षण नहीं। जड़ का लक्षण है।

राम०—वृक्ष भीतर से बढ़ता है। जैसे हमारे शरीर बढ़ते हैं।

चन्द्र०—यह ठीक है। हमारे शरीर और वृक्ष में कुछ सादृश्य अवश्य है। ऐसा सादृश्य और जड़ पदार्थों में भी मिलेगा, परन्तु जीव होने के लिए तो वह छः लक्षण चाहिए। आप कैसे सिद्ध करेंगे?

राम०—नीम के वृक्ष से रस निकलता है, मानो वह रो रहा है।

चन्द्र०—आपका 'मानो' शब्द का प्रयोग ही बता रहा है कि आप आलङ्कारिक भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। कवियों ने भी तो कहा है 'अपि ग्रावा रोदिति' पत्थर भी रो देता है। क्या पत्थर के जान है?

ठा० अभ्यु०—चनों में जान है। जब उसको भाड़ पर भूनते हैं तो उनमें शब्द निकलता है। वह रोते हैं।

चन्द्र०—आप तो हँसी करने लगे। सूखे चने रोते हैं। हरे नहीं। इससे तो सिद्ध हुआ कि हरे चनों में जान नहीं। सूखों में जान आ जाती है। थबई भी कहा करते हैं कि अब इस दीवार में जान नहीं। यह छत को सम्भाल नहीं सकती। यहाँ जान का अर्थ है शक्ति, परन्तु इससे जीव तो सिद्ध नहीं होता।

राम०—जैसे हमारे शरीर में नस-नाड़ियाँ हैं और रक्त बहता है, इसी प्रकार वृक्षों में भी नस-नाड़ियाँ हैं और उनमें रस बहता है।

चन्द्र०—और पहाड़ की चट्टानों में भी नस-नाड़ियाँ हैं और उनमें नदियाँ बहती हैं।

राम०—तो बताइये कि वृक्षों में उपचय, अपचय, वृद्धि कैसे होती हैं।

चन्द्र०—अन्य पदार्थों के समान रासायनिक क्रिया के द्वारा इसको अंग्रेजी में "कैमिकल एकशन" (Chemical Action) कहते हैं।

राम०—तो कुत्ते के शरीर में भी "कैमिकल एकशन" (रासायनिक क्रिया) क्यों नहीं?

चन्द्र०—निषेध कौन करता है। मानिये। अवश्य मानिये। हमारे शरीरों में भी 'केमिकल एकशन' होता है। इसमें हमारा कुत्ते का सजीव होना सिद्ध नहीं होता।

राम०—फिर हम में भी जीव नहीं।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—हम में जीव होने के दूसरे प्रमाण हैं। ज्ञान के तीन लक्षण हैं कर्तुं, अकर्तुं अन्यथा कर्तुं। किसी काम को करना, न करना और उलटा करना! हम में यह तीनों बातें पाई जाती हैं। वृक्षों में नहीं।

राम०—छुई-मुई या लाजवन्ती देखी है?

चन्द्र०—हाँ! देखी है?

राम०—आप उसको छुएँ तो उसके पत्ते आपकी उँगली लगते ही मुरझा जाते हैं। वह शरमा जाती है।

चन्द्र०—वाह पण्डितजी! वाह आप तो कमाल करते हैं। छुई-मुई मर्द के छूने से मुरझाती है या स्त्री के छूने से।

राम०—दोनों के छूने से।

चन्द्र०—स्त्री से स्त्री क्यों लजावे। पुरुष से लजाना तो ठीक भी है, फिर क्या दूसरी लताएँ निर्लज्ज हैं? वे क्यों नहीं लजातीं? दूसरी बात यह है कि स्त्रियाँ अपने सजातीय नर से लजावें? क्या घोड़ी भी आपको देखकर शरमाती है? फिर क्या घोड़ी निर्जीव है?

राम०—तो छुई-मुई के मुरझाने का क्या कारण है?

चन्द्र०—वही केमिकल एकशन। बिजली के तार को छुइये। करेण्ट मारेगा, परन्तु बिजली में जान नहीं। चुम्बक भी तो लोहे को खींचता है। उसमें जान नहीं।

सेठ० लल्लू०—क्या आज वृक्षों के पीछे ही पड़ रहेंगे? और काम भी तो करना है, चलिए।

चन्द्र०—बहुत अच्छा। अब कल! नमस्ते। नमस्ते।

राम०—नमस्ते। कल मैं शास्त्रों के प्रमाण लाऊँगा। पण्डित चन्द्रदेवजी आपको वृक्षों में तो जीव मानना ही पड़ेगा।

चन्द्र०—यदि सिद्ध हो जायेगा तो मान लेंगे। सत्य को ग्रहण करना और असत्य को त्यागना मनुष्य का धर्म है। पक्षपात नहीं करना चाहिए।

राम०—कल आपको मैं निश्चय करा दूँगा कि वनस्पति में जीव है। बड़े-बड़े पण्डितों ने लिखा है।

चन्द्र०—केवल लिखने से कुछ नहीं होता। सप्रमाण बात कीजिए।

राम०—अच्छा! नमस्ते कल देखा जायेगा।

चन्द्र०—नमस्ते, नमस्ते।

Scanned by CamScanner

पाठक विचार करें—

ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में वृक्षों में जीव विषयक प्रकरणों के अवलोकन एवं उनके समन्वय से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि महर्षि दयानन्द वृक्षों में सुषुप्ति अवस्था में जीव की सत्ता को मानते थे। जैसा कि सत्यार्थप्रकाश के द्वादश समुल्लास के उद्धरण से स्पष्ट है।

(१९.०४.१९५४) *—सार्वदेशिक धर्मार्य सभा का निर्णय*

सातवीं वार्त्ता

जगदीशचन्द्र बोस

राम०—आपने जगदीशचन्द्र बोस का नाम सुना होगा।

चन्द्र०—सुना है। मैं जानता हूँ कि आप उन्हीं के बल पर उछल रहे हैं।

तसल्ली०—बोस महोदय तो बहुत बड़े वैज्ञानिक थे।

चन्द्र०—हाँ, थे।

राम०—आप उनका प्रमाण मानते हैं।

चन्द्र०—किस बात का?

राम०—वृक्षों में जीव होने का।

चन्द्र०—जगदीशचन्द्र बोस तो भौतिकी शास्त्र के पण्डित थे?

राम०—हाँ?

चन्द्र०—भौतिकी शास्त्र जड़ वस्तुओं का विषय है या चेतन का।

राम०—जड़ का।

चन्द्र०—जीव चेतन है या जड़?

राम०—चेतन।

चन्द्र०—तो चेतन के विषय में भौतिकी के पण्डित का प्रमाण क्या अर्थ रखता है? बहुत से वैज्ञानिक लोग मनुष्यों में भी जीव नहीं मानते, फिर क्या आप मनुष्यों को निर्जीव कहेंगे! चौबेजी छब्बे होने को चले—दुबे ही रह गये।

तसल्ली०—जगदीशचन्द्र बोस बहुत बड़े वैज्ञानिक थे। उनका लोहा यूरोप ने भी माना है।

चन्द्र०—क्या आप कह सकते हैं कि उनसे बड़ा कोई वैज्ञानिक नहीं?

Scanned by CamScanner

राम०—यह तो नहीं कहा जा सकता।

चन्द्र०—क्या उनके वनस्पति सम्बन्धी अन्वेषणों और प्रतिपत्तियों को समस्त वैज्ञानिक जगत् ने उसी प्रकार मान लिया है, जैसे मैडेम क्यूरी के रैडियम के अन्वेषण को समस्त वैज्ञानिकों ने स्वीकार कर लिया था।

ला० तसल्ली०—ऐसा तो नहीं है, परन्तु उनको 'सर' की पदवी दी थी।

चन्द्र०—किसने!

ला० तसल्ली०—सरकार ने।

चन्द्र०—क्या 'सर' की पदवी वैज्ञानिक है या राजनैतिक?

तसल्ली०—राजनैतिक।

चन्द्र०—फिर? वैज्ञानिकों ने उनको कौन-सी पदवी दी थी?

राम०—कोई नहीं! उनको नोबिल पुरस्कार तक नहीं मिला, जो डाक्टर रमन को मिल गया।

चन्द्र०—बस यही सोच देखो! बोस के पीछे चलने से कोई लाभ नहीं। क्या आपको पता नहीं कि बम्बई के एक पारसी प्रोफेसर दस्तूर ने यह चैलेंज दिया था कि मैं सर जगदीशचन्द्र बोस की प्रतिपत्तियों का खण्डन करूँगा।

राम०—फिर क्या हुआ?

चन्द्र०—सर बोस ने चैलेंज स्वीकार नहीं किया। यह कह कर टाल दिया कि मैं एक युवक से शास्त्रार्थ करना नहीं चाहता। मेरी ख्याति तो जगत् भर में फैली हुई है?

राम०—यह ठीक तो था।

चन्द्र०—मैं यह नहीं कहता कि उन्होंने अनुचित किया। मेरा कहना तो इतना है कि सर जगदीशचन्द्र बोस की प्रतिपत्तियाँ सर्वतन्त्र नहीं है।

राम०—उन्होंने ऐसे यन्त्र बनाये, जिससे वृक्षों का सोना, जागना, रोना, हँसना, अङ्कित हो जाता है।

चन्द्र०—आपने तो वृक्षों को सुषुप्ति अवस्था में बताया थे, फिर वृक्षों के रोने, हँसने, जागने का क्या अर्थ? जगदीशचन्द्र बोस के सिद्धान्त आपके पोषक नहीं। यदि आप वृक्षों को सुषुप्ति अवस्था में

Scanned by CamScanner

मानते हैं तो सर बोस को छोड़िये। यदि सर बोस का पल्ला पकड़ते हैं तो सुषुप्ति के सिद्धान्त को छोड़ना पड़ेगा। दोनों बातें नहीं हो सकतीं।

राम०—आपने तो मुझे पेच में डाल दिया।

चन्द्र०—मैंने नहीं डाला। वृक्षों में जीव माननेवालों ने बिना सोचे समझे जगदीशचन्द्र बोस की दुहाई देकर अपने को और जगत् को भ्रम में डाल रक्खा है। जगदीशचन्द्र बोस ने कभी दार्शनिक होने का दावा नहीं किया। वे भौतिक विज्ञान के पण्डित थे, परन्तु हमने अपनी मूर्खता से उनको सब कुछ मान लिया। वह अपनी वनस्पति-परीक्षण सम्बन्धी पुस्तक में स्वयं लिखते हैं कि यह रासायनिक प्रतिक्रियाएँ हैं। इतनी बात ठीक है कि यह प्रतिक्रियाएँ हमारे शरीर की प्रतिक्रियाओं के समान अवश्य हैं। यदि कोई मनुष्य विष खाले तो उसके रक्त में ऐसी प्रतिक्रिया होगी, जो जीव की ओर से न होगी। उसको जैविक प्रयत्न नहीं कह सकते। यदि जीव का बस चलता तो विष को विकार उत्पन्न करने से रोक देता, परन्तु वह रोक नहीं सकता। ऐसी अनेक प्रतिक्रियाएँ मृत्यु के पश्चात् लाश में भी हुआ करती हैं। आप लाश को तो सजीव नहीं कहेंगे?

राम०—नहीं।

चन्द्र०—फिर!

राम०—समस्त हिन्दू जगत् में बोस महोदय का बड़ा नाम है। हमने बड़े-बड़े पण्डितों को कहते सुना है कि बोस ने भारत वर्ष के अति प्राचीन सिद्धान्त को नवीन रीति से सिद्ध कर दिखाया।

चन्द्र०—किस सिद्धान्त को?

राम०—इसी को कि जगत् का कोई भाग चेतनाशक्ति से रिक्त नहीं।

चन्द्र—फिर तो पत्थर भी चेतन हो गया। आपने जड़ और चेतन का भेद ही उड़ा दिया। जैसा पत्थर, वैसा नीम, वैसा बकरा, वैसे आप! वाह जी वाह! क्या यही भारत का प्राचीन सिद्धान्त है?

तस०—हर चीज में जान हैं?

चन्द्र०—इस लकड़ी में भी।

तसल्ली०—हाँ! इस छड़ में भी।

चन्द्र०—हर चीज में जीव है या हर चीज जीव है?

तस०—आप तो बाल की खाल निकालते हैं।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—बाल की खाल नहीं। बाल में खाल कहाँ? परन्तु यदि कोई गधा शेर की खाल ओढ़ ले तो उसको तो अलग करके दिखाना ही पड़ेगा।

तस०—अच्छा हम कहते हैं कि हर चीज जीव है।

चन्द्र०—अगर हरचीज जीव है तो शरीर और शरीर का भेद भी नहीं रहा। जड़ी शरीर कुछ भी नहीं रहा। जीव ही जीव रह गया। अगर आप कहेंगे कि हर चीज में जीव है तो उस चीज को जीव का शरीर मानना पड़ेगा। ऐसा कहने से वह चीज जड़ होगी और उसमें का जीव चेतन! फिर आप यह न कह सकेंगे कि हर चीज में जीव है, क्योंकि जड़ का अस्तित्व तो बना रहता, परन्तु यदि आप हर चीज को जीव मानेंगे तो चेतन और जड़ का भेद मिट जायेगा, फिर आप यह नहीं कह सकते कि अमुक प्राणी मर गया। मरना तो तभी होता है, जब जीव निकल जाए और जड़ शरीर पड़ा रहे।

राम०—तो बोस ने क्या सिद्ध किया है?

चन्द्र०—यह तो आप ही बतावें।

तस०—लोग कहते हैं कि हर चीज में आत्मा है।

चन्द्र०—वह ठीक कहते हैं। परमात्मा हर चीज में है। जड़ में भी और चेतन में भी। जीवित प्राणी में भी और उसकी लाश में भी। वह तो सर्वव्यापक है। सर्वव्यापक परमात्मा को दुःख या कष्ट नहीं होता, क्योंकि व्यापक होते हुए भी वह इस जगत् के द्वारा चेष्टा नहीं करता। सजीव होना और बात है और आत्म-व्याप्त होना और बात। ईश्वर हर जड़ पदार्थ के भीतर व्यापक है, परन्तु वह पदार्थ चेतन नहीं हो जाता। चेतना तो उसको कहते हैं, जिसमें परमात्मा के अतिरिक्त जीव भी हो और वह जीव उस जड़ को शरीरवत् प्रयुक्त करे।

कबीर बख्श०—यह क्या बात कही। मेरी समझ में नहीं आया।

चन्द्र०—मेरे कहने का मतलब यह है कि केवल जीव के रहने से कोई चीज चेतन नहीं हो जाती। मैं कमरे के भीतर बैठा हूँ, परन्तु कमरा चेतन नहीं है। मैं कम्बल में लिपटा हूँ, परन्तु कम्बल चेतन नहीं है, क्योंकि कमरे की दीवारें या कम्बल के तन्तु मेरे शरीर की इन्द्रियाँ नहीं है।

राम०—शरीर का क्या लक्षण है?

चन्द्र०—गौतम ने न्याय सूत्रों में लिखा है—

Scanned by CamScanner

चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयःशरीरम्। (न्याय दर्शन १।१।११)

जिसके द्वारा जीव इन्द्रियों की चेष्टा करता है, वह शरीर है। शरीर केवल ऊपरी खोल का नाम नहीं है।

तस०—अच्छा तो जगदीशचन्द्र बोस की पुस्तकों से हमारे प्रश्न पर कुछ प्रकाश नहीं पड़ता?

चन्द्र०—कुछ नहीं। भ्रम उत्पन्न हो जाता है। लोग बिना सोचे-समझे भेड़ों की भाँति चल पड़ते हैं।

राम०—बसु महोदय के सिद्धान्त पर तो मुझको भी शङ्का हुआ करती थी, क्योंकि यदि वृक्ष सुषुप्ति अवस्था में हैं तो उनका रोना हँसना कैसा? परन्तु वृक्षों में जीव होने के बहुत से प्रमाण हैं।

चन्द्र०—लाइये। लेकिन आज से बोस का नाम न लीजिये।

राम०—कल!

चन्द्र०—बहुत अच्छा नमस्ते!

✿

आठवीं वार्त्ता

स्वामी दयानन्द

राम०—आज मैं एक ऐसे सज्जन को लाया हूँ कि पण्डित चन्द्रदेवजी को चुप होना पड़ेगा। लोहे को लोहा काटता है। पं० इन्द्रदेवजी वृक्षों में जीव मानते हैं और आर्यसमाजी हैं। पण्डित चन्द्रदेवजी के समान यह भी शास्त्रार्थ महारथी हैं।

ला० तसल्ली०—यह आपने खूब किया। आज मौज रहेगी।

कबीर०—क्या कहना है। आज जोड़ी बराबर की है।

चन्द्र०—आइये पण्डित इन्द्रदेवजी नमस्ते। हम सब आपका स्वागत करते हैं। आप भी शामिल हो गये अच्छा है।

इन्द्र०—मुझे आश्चर्य है पण्डित चन्द्रदेवजी! आप वृक्षों में जीव नहीं मानते।

चन्द्र०—इसमें आश्चर्य की क्या बात है? हो तो मानूँ?

इन्द्र०—स्वामी दयानन्द ने माना है।

चन्द्र०—यह भी एक प्रश्न है। साध्य है सिद्ध नहीं।

इन्द्र०—क्या आप स्वामी दयानन्द को नहीं मानते? अच्छे सामाजिक हो।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—मैंने कब कहा कि नहीं मानता।

इन्द्र०—सत्यार्थप्रकाश को प्रमाण मानते हो या नहीं।

चन्द्र०—मानता हूँ।

इन्द्र०—क्या उसमें नहीं लिखा है कि वृक्षों में जीव है?

चन्द्र०—क्या उसमें लिखा है वृक्षों में जीव है?

ला० तसल्ली०—अब आया है मुबाहिसे में मजा! आखिर दो टक्कर के आदमी हैं न। घर का भेदी लङ्का ढावे। पण्डित इन्द्रदेव भी वही ग्रन्थ पढ़े हैं, जो पण्डित चन्द्रदेव। इन्द्रचन्द्र की झपट देखने के योग्य है।

कबीर०—आज तातील भी है। बहस का वक्त एक घण्टे बढ़ा देना चाहिए।

सेठ लल्लू०—हमारी तो तातील नहीं है। हमको दुकान पर जाना है।

ला० तसल्ली०—अजी लालाजी चले भी जाना। आज देर ही सही। मौज तो देखिए।

इन्द्र०—हँसी की बात छोड़िये! मैं अनेक प्रमाण दे सकता हूँ कि स्वामी दयानन्द वृक्षों में जीव मानते थे।

चन्द्र०—एक प्रमाण भी यदि ठीक है तो माननीय और पर्याप्त होगा। १०० निर्बल युक्तियाँ एक सबल युक्ति का सामना नहीं कर सकतीं।

इन्द्र०—अच्छा लीजिये।

चन्द्र०—पहले यह तो बताइये कि स्वामी दयानन्द ने इस प्रश्न को कहाँ उठाया है कि वृक्षों में जीव है या नहीं।

इन्द्र०—ऐसा प्रश्न तो नहीं उठाया, परन्तु अन्य विषयों के अन्तर्गत यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वामी दयानन्द वृक्षों में जीव के सिद्धान्त के पोषक थे।

चन्द्र०—अच्छा अब आरम्भ कीजिये। भूमिका की आवश्यकता नहीं।

इन्द्र०—लीजिये एक ऐसा प्रमाण लीजिये जिसके सामने फिर आपको ननुनच करने का अवसर ही नहीं मिल सकता। देखिये—

मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, जन्तु आदि जातियाँ परमेश्वर कृत हैं। जैसे मनुष्यों में गौ, अश्व, हस्ति आदि जातियाँ, वृक्षों में पीपल, वट, आम्र आदि, पक्षियों में हंस, काक, वकादि।

(स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ५०९)

Scanned by CamScanner

पं० राम०—भाई, वाह! बड़ा अच्छा प्रमाण दिया। क्या कहना है इन्द्रदेवजी आपका। पण्डित चन्द्रदेवजी अब तो आपको मानना ही पड़ेगा।

सेठ लल्लू०—(उछल कर) अब तो मुझे निश्चय हो गया कि स्वामी दयानन्द वृक्षों में जीव मानते थे।

ठा० अभ्यु०—जब वृक्षों में जीव सिद्ध है तो मांस खाने में क्या पाप? जैसा बकरा वैसा तरबूज।

चन्द्र०—आप लोग तो पहाड़ को फूँक से उड़ा देना चाहते हैं। न तो शब्दों पर विचार करेंगे न प्रसङ्ग को देखेंगे और नतीजा निकालने दौड़ पड़ेंगे, यह है आपकी सत्यासत्य की खोज।

इन्द्र०—तो क्या हमने झूठा प्रमाण दिया है?

चन्द्र०—शब्द तो ठीक है, परन्तु वह आपके मत के पोषक नहीं।

इन्द्र०—हमारा मत क्या है।

चन्द्र०—वृक्षों में जीव है?

इन्द्र०—यह मत सिद्ध क्यों नहीं हुआ?

चन्द्र०—इसलिए कि स्वामीजी के इस वाक्य में इस मत का लेश तक नहीं।

इन्द्र०—है तो, देखते नहीं 'वृक्ष ' 'परमेश्वरकृत' जातियाँ हैं, जैसे 'जृक्षों में पीपल, वट, आम आदि।'

चन्द्र०—यह तो हम भी मानते हैं। वृक्ष एक परमेश्वरकृत जाति है, जैसे पशु, पक्षी आदि! फिर वृक्षों में पीपल, वट, आम आदि भी परमेश्वरकृत जातियाँ है, जैसे पशुओं में कुत्ता, बिल्ली आदि! यह जातियाँ मनुष्यकृत नहीं, परमेश्वरकृत है। इसमें सन्देह ही क्या है? परन्तु यह कहाँ लिखा है कि वृक्ष आम आदि जीवधारी जातियाँ है? यहाँ जीव का न तो प्रसङ्ग है न जीव की ओर सङ्केत हैं, ऊपर नीचे कई पङ्क्तियाँ पढ़ जाइये, विषय को छोड़कर विषयान्तर की ओर दौड़ना पण्डितों को शोभा नहीं देता।

इन्द्र०—जाति का अर्थ यहाँ जीवधारी जाति से है। देखिये न्याय दर्शन—

समान प्रसवात्मिका जाति॥ (न्याय दर्शन)

अर्थात् जो अपने शरीर से अपना ही जैसा उत्पन्न कर दे वह जाति है।

चन्द्र०—यह प्रमाण मैंने बहुत सुना है और पण्डितों के पाण्डित्य

Scanned by CamScanner

पर आश्चर्य भी किया है। मुझे अत्यन्त खेद है और आपको भी होना चाहिए कि किसी प्रतिपत्ति की सिद्धि के लिए लोग बिना प्रसङ्ग देखे शास्त्र का प्रमाण उद्धृत कर देते हैं।

इन्द्र०—तो क्या इस सूत्र का अर्थ हमने गलत किया है?

चन्द्र०—गलत! सरासर गलत! मैं आपको दोष नहीं देता। इस सूत्र का गलत अर्थ करने की तो परम्परा चल गई है। जरा वात्स्यायन का भाष्य देखिये और प्रसङ्ग पर दृष्टि डालिये। यहाँ 'प्रसव' का अर्थ जन्म है ही नहीं! योनि का प्रसङ्ग न तो गौतम को सूझा न वात्स्यायन को। वहाँ तो जाति और व्यक्ति के लक्षण का प्रसङ्ग था। वह सजीव और निर्जीव दोनों पर लागू होता है। न्याय दर्शन का २।२।६४ सूत्र हैं।

जात्याकृतिव्यक्तयस्तु पदार्थ।

अर्थात् किसी पदार्थ में तीन बातें होती हैं। जाति, आकृति और व्यक्ति! व्यक्ति और आकृति की व्याख्या करके गौतमजी कहते हैं—

समान प्रसवात्मिका जाति॥ (२।२।७१)

वात्स्यायन मुनि लिखते हैं—

या समानां बुद्धि प्रसूते भिन्नेष्वधिकरणेष्वे तरेतरतो न व्यावर्त्तन्ते योऽर्थोऽनेकत्र प्रत्ययानुवृत्तिनिमित्तं तत् सामान्यम्। यञ्चकेषाञ्चिद् भेदं कृतश्चिद् भेदं करोति तत् सामान्यविशेषो जातिरिति।

अर्थात् भिन्न-भिन्न वस्तुओं में जो समान बुद्धि उत्पन्न करे वह जाति है, जो लोग विकासवाद (Evolution) के विरुद्ध इस सूत्र को पेश करते हैं, वह अत्यन्त भूल करते हैं। 'प्रसव' शब्द का ऐसा अनर्थ शायद ही कभी किया गया हो।

सेठ ल०—लो पं० इन्द्रदेवजी! यह गोली आपकी खाली गई।

राम० श०—(कुछ सोचकर और सत्यार्थप्रकाश के पन्ने लौट फेर कर) सन्देह तो मुझे भी होता है।

ठा० अभ्यु०—वाह पं० चन्द्रदेवजी, खूब काटा—

चन्द्र०—मैं काटना कूटना नहीं जानता। जो बात थी वह कह दी।

इन्द्र०—अच्छा यह प्रमाण न सही, दूसरा लीजिये। प्रमाण तो बहुत हैं।

चन्द्र०—होंगे सब ऐसे ही। कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा, भानमती ने कुनबा जोड़ा।

Scanned by CamScanner

इन्द्र०—तो क्या मैं भानमती हूँ?

चन्द्र०—नहीं! पण्डितजी नाराज न हूजिये। अनुचित बात हो तो क्षमा कीजिये। प्रमाण दीजिये।

इन्द्र०—लीजिये—

प्रश्न—देखो, निलोत अर्थात् जितने हरे शाक, पात और कन्दमूल हैं, उनको हम लोग नहीं खाते, क्योंकि निलोत में बहुत और कन्दमूल में अनन्त जीव हैं।

उत्तर— हरित शाक खाने में जीव का मारना उनको पीड़ा पहुचनी क्यों कर मानते हो ?

भला जब घर का अन्त है तो उसमें रहनेवाले अनन्त, क्योंकर हो सकते हैं? जब कन्द का अन्त हम देखते हैं तो उसमें रहनेवाले जीवों का अन्त क्यों नहीं? (स०प्र०समु० १२, पृ० ६१२)

रामशरण—यह तो स्पष्ट प्रमाण है।

तस०—अभी पं० चन्द्रदेव की भी तो सुन लो। जल्दी क्यों करते हो।

चन्द्र०—मुझे तो यह प्रमाण भी वैसा ही जँचता है। आप सब विद्वान् यहाँ बैठे हैं। कृपा करके सत्यार्थप्रकाश के इस प्रश्नोत्तर को कई बार पढ़ें और निष्पक्ष होकर बतावें कि क्या इससे मेरे मत का खण्डन होता है?

ला० तस०—यहाँ तो यह बताया है कि निलोत में बहुत जीव हैं और कन्दमूल में अनन्त। स्वामीजी ने 'अनन्त जीव' होने का तो खण्डन ही कर दिया।

चन्द्र०—एक बात और है। स्वामीजी कहते हैं कि जब घर का अन्त है तो उसमें रहनेवाले अनन्त कैसे हो सकते हैं, अर्थात् कन्दमूल घर है। उनमें अनेक प्रकार के सजीव कीड़े, कृमि रहते हैं। जैसे खाट में खटमल। खटमलों का घर है, शरीर नहीं, खाट तो निर्जीव ही है, इसी प्रकार कन्दमूल कृमियों का घर है, परन्तु अनन्त कृमियों का नहीं। आप झाड़-पोंछ या धोकर उनको साफ कर सकते हैं। इसी प्रकार 'निलोत' में बहुत से जीव हैं। इससे भी सिद्ध होता है कि निलोत बहुत से जीवों का घर है, जैनियों का सङ्केत उसी ओर है। स्वामी दयानन्द कहते हैं कि हरित शाक खाने से जीव का मारना सिद्ध नहीं होता, क्योंकि हरित शाक किसी जीव का शरीर नहीं। कन्दमूल का भी यही हाल है। मूली, गाजर यदि किसी जीव के शरीर होते

Scanned by CamScanner

तो अवश्य उसके खाने से जीव की मृत्यु होती। तात्पर्य यह है कि शाक खानेवालों का उद्देश्य किसी जीव को सताना नहीं हैं। शायद पं० इन्द्रदेवजी एक और प्रकरण पेश करें। इसलिए उसको उनकी ओर से मैं ही पेश किये देता हूँ। इससे और स्पष्ट हो जायेगा कि वृक्षों में जीव माननेवाले जिन उद्धरणों को पेश करते हैं, वह सब अप्रासाङ्गिक होने से उनके मत की पुष्टि नहीं करते। लीजिये—

जैसे वैद्य वा आजकल के डाक्टर लोग नशे की वस्तु खिला वा सुंघा के रोगी पुरुष के शरीर के अवयवों को काटते व चीरते हैं, उसको उस समय कुछ भी दुःख विदित नहीं होता, वैसे वायुकाय अथवा अन्य स्थावर शरीरवाले जीवों को सुख व दुःख प्राप्त कभी नहीं हो सकता। (स०प्र०समु० १२, पृष्ठ ६१२)

''उन, जल, स्थल, वायु के स्थावर शरीरवाले अत्यन्त मूर्छित जीवों को दु-ख या सुख कभी नहीं पहुँच सकता।''

(स०प्र०समु० १२, पृष्ठ ६१५)

यहाँ स्वामीजी का तात्पर्य उन अनेक जीवों से है, जो वायु या अन्यत्र उड़ते रहते हैं और वह इतने सूक्ष्म हैं कि हमारी खान-पान की प्रगतियों का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यदि वह हमारे साँस में भी चले जाएँ तो मरते नहीं। बहुत से कृमि तो हमारे शरीर को घर बनाकर रहते हैं। उनके लिए हमारा शरीर उसी प्रकार का एक नगर है, जैसे बम्बई, लखनऊ आदि हमारे लिए। हमारी नस-नाड़ियां तथा छिद्र उनके लिए बड़ी-बड़ी सड़कें हैं। हमारी जठराग्नि अनेक प्रकार के क्रिमियों को भस्म नहीं कर सकती, इसलिए यह कहना कि हमारे शाक खाने से उनको पीड़ा पहुँचती है ठीक नहीं।

सेठ लल्लूमल—बहुत जैनी लोग तरबूज को नहीं खाते, क्योंकि उसका गूदा गोश्त के सदृश होता है। गाजर भी नहीं खाते, क्योंकि उसमें हड्डी होती है।

चन्द्र०—स्वामी दयानन्द ने इन्हीं जैनियों के भ्रममूलक विचारों का तो खण्डन किया है। कोई चीज गोश्त की आकृति धारण करने से गोश्त नहीं हो जाती और न हड्डी की आकृति होने से हड्डी। स्वामी दयानन्द का तात्पर्य यह है कि जब तक किसी वस्तु का सजीव होना या किसी सजीव पदार्थ की हत्या सिद्ध न हो जाए हिंसा का प्रश्न उठता ही नहीं।

Scanned by CamScanner

पं० इन्द्रदेव—पं० चन्द्रदेवजी, आपने मुझे अपने विचारों का बना लिया। मैंने कभी इस प्रकार का विचार नहीं किया था। अच्छा एक बात बताइये। स्थावर शरीर का क्या अर्थ है?

चन्द्र०—बहुत से ऐसे जीव हैं, जिनके शरीर अत्यन्त निश्चल अवस्था में हैं, जैसे गूलर के भिनगे। बहुत सूक्ष्म होने से उन पर हमारी किसी क्रिया का प्रभाव नहीं पड़ता। कहीं-कहीं आयुर्वेद में वीरबघूटी की भी स्थावर में गणना की गई है। यहाँ स्वामीजी के इस वाक्य पर विचार कीजिये—

''वायु काय अथवा अन्य स्थावर शरीर''

यहाँ 'अन्य' शब्द का प्रयोग बताता है कि वायुकाय भी स्थावर है और अन्य भी। उन सबको स्वामीजी ने मूर्छित बताकर क्लोरोफार्म से उपमा दी है। क्लोरोफार्म की उपमा उपमामात्र है, अधिक नहीं। स्वामीजी जैनियों के अहिंसा सिद्धान्त को तो स्वीकार करते हैं, परन्तु उनको यह आक्षेप है कि जैनियों ने अहिंसा सिद्धान्त को खींच तान कर इतना बढ़ा दिया है कि वह अव्यावहारिक हो गया है। जैसे गाजर में हड्डी या तरबूज में गोश्त की कल्पना करना अथवा बड़े-बड़े जीवों की परवाह न करके वायुकाय के कृमियों की चिन्ता करना। अथवा खटमलों को पालने के लिए मनुष्यों के रक्त की हिंसा करना इत्यादि। हम लोग संसार के प्राणियों की रक्षा करते हुए भी बहुत से प्राणियों की रक्षा नहीं कर सकते। उनकी चिन्ता व्यर्थ है। हमको न किसी की हिंसा करनी चाहिए न हिंसा की नीयत से कोई काम करना चाहिए।

इन्द्र०—अच्छा पण्डितजी, आप नीचे के प्रमाण के विषय में क्या कहते हैं—

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरता नरः। (मनु० १२।९)

जो नर शरीर से चोरी, परस्त्रीगमन, श्रेष्ठों के मारने आदि दुष्ट कर्म करता है, उनको वृक्षादि स्थावर का जन्म मिलता है।

(स०प्र०समु० ९, पृष्ठ ३३४, ३३५)

चन्द्र०—इसमें तो केवल इतना सिद्ध हो सकता है कि शायद मनुस्मृति में वृक्षों के सजीव होने की कुछ झलक हो! मैं झलक मात्र कहता हूँ, क्योंकि मूल श्लोक में 'स्थावरता' शब्द है। अनुवाद में 'वृक्ष' किसी लेखक ने जोड़ दिया है। स्वामीजी का ऐसा सिद्धान्त प्रतीत नहीं होता। न उन्होंने 'स्वमन्तव्यामन्तव्य' में ऐसा लिखा है।

Scanned by CamScanner

मनुस्मृति में तो बहुत से क्षेपक हैं। जैसे पहले अध्याय में स्त्री के पेट से वृक्ष आदि का उत्पन्न होना। यहाँ मनुस्मृति के यह श्लोक देने का स्वामीजी का प्रयोजन केवल एक बात को सिद्ध करना है, अर्थात् रजोगुण, सतोगुण और तमोगुण के अनुसार योनियाँ होती हैं, परन्तु योनियों की जो गणना क्रमशः गिनाई गई है, वह कदापि प्रामाण्य नहीं। यह क्रम इतना ऊटपटाङ्ग है कि कोई बुद्धिमान् इसको मान नहीं सकता। उदाहरण के लिए—

नक्षत्राणि च दैत्याश्च प्रथमासात्विकी गति। (मनु० १२।४८)

भला 'नक्षत्र' भी कोई योनि है? फिर

तुरङ्गाश्च शूद्रा....

बराहाश्च मध्यमा तामसी गति। (मनु० १२।४३)

क्या सुअर और शूद्र एक से होते हैं। फिर

मनुष्यत्वञ्च राजसाः। (मनु० १२।४०)

का क्या अर्थ होगा? क्या शूद्र मनुष्य नहीं हैं।

इसी प्रकार यदि आप मनुस्मृति में दी हुई योनियों की एक सूची बनावें कि किस गुण से कौन-सी योनि बताई है तो थोड़े विचार से पता चल जायेगा कि यह गणना बुद्धिशून्य और अटकल मात्र हैं। इसके अतिरिक्त मैं एक ऐसा प्रमाण देता हूँ, जहाँ स्वामीजी ने वृक्ष को स्पष्ट रीति से जड़ कहा है। देखिए—

भला जो वृक्ष जड़ पदार्थ है, उसका क्या अपराध था कि उसको शाप दिया और वह सूख गया।

(सत्यार्थप्रकाश समु० १३ आयत ७८ की समीक्षा पृष्ठ ६७६)

इन्द्र०—आज मेरे विचारों में बड़ा परिवर्तन हुआ। मैं और सोचूँगा। यदि और प्रमाण मिले तो उनको भी लाऊँगा।

चन्द्र०—बहुत अच्छा! अब चलें।

✿

नवीं वार्त्ता

वृक्ष और सुषुप्ति

राम०—लोग कहते हैं कि वृक्ष सुषुप्ति अवस्था में है। पण्डित चन्द्रदेवजी, इस विषय में आप क्या कहते हैं?

चन्द्र०—मैं पहले कह चुका हूँ। सुषुप्ति अवस्था क्या है? और

Scanned by CamScanner

किसकी है? स्थूल शरीरस्थ जीव की तीन अवस्थाएँ हैं। एक जागृत, दूसरी स्वप्न और तीसरी सुषुप्ति। यह तीनों अवस्थाएँ जीव का शरीर के साथ तीन प्रकार का सम्बन्ध बताती हैं। गौतम के उस न्यायसूत्र पर विचार कीजिए।

चेष्टेन्द्रियाआर्थाश्रय शरीरम्॥ (न्यायदर्शन १।१।११)

ला० तसल्ली०—इस सूत्र का अर्थ समझाइये।

कबीर०—हमारी समझ में तो कुछ नहीं आता। आप तो घोर संस्कीरत बघारते हैं। समझाते चलिये।

चन्द्र०—लीजिये। जागने की अवस्था में हमारी इन्द्रियों (कान, आँख आदि) का बाहरी दुनियाँ से सम्बन्ध रहता है। स्वप्न में हम जो कुछ जागते में देख चुके हैं, उसी को लौट-पौट करते हैं। हमारी आँख बाहर की चीजों को देखती नहीं, परन्तु पहली देखी हुई चीजों का इस प्रकार स्मरण करती हैं कि यह मालूम होता है कि हम सचमुच अभी देख रहे हैं, **सुषुप्ति अर्थात् गहरी नींद में हमारी इन्द्रियाँ भी आराम करती हैं और मन भी।** केवल प्राण चलता रहता है। मैं पहले कह चुका हूँ कि यह स्थूल शरीर जीव की वह तीन अवस्थाएँ हैं, जिनमें वह उस शरीर के साथ तीन प्रकार का सम्बन्ध रखता है। कोई शरीर ऐसा नहीं है, जिसमें जीव केवल एक ही अवस्था में रहता हो, अर्थात् केवल जागृत, केवल स्वप्न या केवल सुषुप्ति, जागृत के पीछे सुषुप्ति और सुषुप्ति के पीछे जागृत होती है। सुषुप्ति किसी जीव के अस्तित्व का प्रमाण नहीं है, क्योंकि उस अवस्था में 'कर्तुं, अकर्तुं, अन्यथा कर्तुं, का प्रमाण नहीं मिल सकता। दो जागृतियों के बीच की अवस्था सुषुप्ति है। जागृत को देख कर ही सुषुप्ति का पता लगता है।

ठा० अभ्यु०—कैसे?

चन्द्र०—देखिये, एक आदमी घोर निद्रा में सो रहा हो। कोई पूछे—"यह कौन है।" आप कहते हैं "यह पण्डितजी हैं?" "या मास्टर साहेब हैं।" या "तहसीलदार साहेब हैं" यह गुण, कर्म, स्वभाव आपने कब देखे?

ठा० अभ्य०—जागृति में।

चन्द्र०—यदि आपने कभी उसको जागृति में न देखा होता और न फिर जागने की आशा होती तो क्या आप कह सकते कि अमुक पुरुष कौन है?

Scanned by CamScanner

ठा० अभ्यु०—कदापि नहीं।

चन्द्र०—सुषुप्ति अवस्था के मनुष्य को देख कर क्या सिद्ध कर सकते हैं कि उसमें ज्ञान है?

ला० तस०—क्यों नहीं? हमने जागृति में उसकी ऐसी हरकतें देखी हैं कि हम समझते हैं कि इसमें ज्ञान है और ऐसे चिह्न दिखाई देते हैं कि जाग पड़ेगा तो फिर वैसी ही हरकतें करेगा।

चन्द्र०—ठीक यही तो मैं कहता हूँ कि सुषुप्ति अवस्था की पहचान जागृति से होती है। वृक्ष को कभी जागृति अवस्था में नहीं देखा फिर कैसे कहें कि वह सुषुप्ति अवस्था में है?

ला० तस०—डाक्टर बोस कहते हैं न कि वृक्ष सोते और जागते हैं।

चन्द्र०—लालाजी! आप भूल गये। जगदीशचन्द्र बोस के विषय में तो पर्याप्त कहा जा चुका है। यदि उनकी बात मान लें तो यह कहना अनुचित होगा कि वृक्ष सुषुप्ति अवस्था में हैं। यदि वृक्ष सोते और जागते हैं तो हमारे समान हुए न कि सुषुप्ति अवस्था में।

राम०—लोग कहते हैं कि हमारे शरीर में दो प्रकार के स्नायु होते हैं—एक बाह्यवाहक (Efferent nerves) जिनके द्वारा हमारी वृत्ति भीतर से बाहर की ओर होती है और दूसरी ऐन्द्रिय-ज्ञानवाहक स्नायु (Sensory nervous) जिनके द्वारा बाह्यजगत् का ज्ञान आत्मा को होता है, जैसे रूप, शब्द आदि।

चन्द्र०—ठीक है।

राम०—कहा जाता है कि वृक्षों में यह ज्ञानवाहक स्नायु नहीं हैं, इसीलिए बाहर की पीड़ा का उनको ज्ञान नहीं होता? इसी को हमारे शास्त्रों ने सुषुप्ति माना है।

चन्द्र०—यह ठीक नहीं है। यदि बोस के सिद्धान्त को मानें तो वृक्षों के ज्ञानवाहक स्नायु भी मानते हैं, तभी तो उनके वृक्ष रोते और हँसते हैं। रोने और हँसने को बोस महोदय यन्त्रों द्वारा जानते हैं। उनको छोड़िये। शास्त्रों पर आइये। यदि ज्ञानवाहक स्नायु नहीं है तो थकते भी नहीं और न उनको विश्राम की जरूरत, फिर सुषुप्ति कैसी? कोई काम कभी न करे। सोता ही रहे! न कभी जागते देखा, न कभी जागते देखोगे? फिर कैसे विश्वास हो? दूसरी बात और है। सुषुप्ति में जागृति से पूरा सम्बन्ध विच्छेद को प्राप्त नहीं होता। एक सोते हुए पुरुष को ललकार कर जगा सकते हैं। यदि बाह्यजगत् से पूर्ण सम्बन्ध

Scanned by CamScanner

विच्छेद हो गया तो ललकारने की सूचना कैसे? ललकारना बाह्यजगत् का काम है।

राम०—उपनिषद् कहती है कि 'स्वापिति' इनका अर्थ है अपने में लय होना[१]। सुषुप्ति में जीव आनन्द में होता है। उसे कुछ दुःख नहीं होता।

चन्द्र०—आप ठीक कहते हैं। उपनिषद् भी ठीक कहती है—कार्य करते करते जीव थक जाता है और सुषुप्ति में विश्राम करके आनन्द प्राप्त करता है, परन्तु जो जागा ही नहीं, उसके स्नायु थके कैसे? और उसे विश्राम की क्या जरूरत? वृक्ष तो कभी जागे ही नहीं, न जागेंगे।

राम०—पहली योनियों में बहुत काम किया होगा अब सो रहे हैं।

चन्द्र०—जैसे कब्र में मुर्दे सोते हैं?

राम०—आप तो हँसी करते हैं।

चन्द्र०—हँसी नहीं करता। विश्राम कौन करता है, जीव नहीं? शरीरस्थ जीव! थकता कौन है? शरीर के स्नायु! जिन स्नायुओं ने कभी काम ही नहीं किया वह क्या थकेंगे? पिछले जन्म के शरीर के स्नायु तो भस्मीभूत हो गये। स्नायुरहित आत्मा के थकने का प्रश्न हीं।

राम०—सूक्ष्म शरीर तो साथ है।

चन्द्र०—हुआ करें। सूक्ष्म शरीर भी तो स्थूल सम्पर्क से ही थकेगा। वस्तुतः थकते तो हैं स्थूल शरीर के स्नायु ही।

राम०—हाँ! यह तो ठीक है।

चन्द्र०—एक और बात है?

राम०—वह क्या? आप कहते हैं कि सुषुप्ति अवस्था आनन्द की अवस्था है। कल्पना कीजिये कि एक बरगद का वृक्ष तीन हजार वर्ष जीवित रहा। तो यों कहना चाहिए कि तीन हजार वर्ष तक उस जीव को क्लेशरहित आनन्द का भोग मिलता रहा। इससे तो प्रतीत होता

---

१. यत्रै तत् पुरुषः स्वपिति नाम सता सोम्य तदा सम्पन्नो भवति स्वमपीतो भवति तस्मादेन स्वपितीत्याचक्षते स्वं ह्यपीतो भवति।

(छान्दोग्य उपनिषद् ६८।१)१.यत्रै तत् पुरुषः स्वपिति नाम सता सोम्य तदा सम्पन्नो भवति स्वमपीतो भवति तस्मादेन स्वपितीत्याचक्षते स्वं ह्यपीतो भवति। (छान्दोग्य उपनिषद् ६८।१)

Scanned by CamScanner

है कि वह अत्यन्त पुण्यात्मा होगा जो किसी छोटी-सी त्रुटिवश मुक्ति को प्राप्त नहीं हो सका, फिर वृक्षों को तमो-योनि क्यों कहते हैं? मनुष्य को तो २४ घण्टों में चार घण्टों की सुषुप्ति भी नसीब न हो और पालक के पौधे दो-दो मास लगातार सुषुप्ति का आनन्द भोगते रहे। कटहल पचासों वर्ष। पीपल सैकड़ों वर्ष और बरगद का वृक्ष? कुछ न पूछो। सिकन्दर के समय से अब तक सुषुप्ति का चैन उठा रहा?

आँखे ही बला लाती हैं इन्सान पै अक्सर।
अंधे ही यहाँ अच्छे हैं बीना नहीं अच्छा॥

कबीर०—बहुत अच्छा। बहुत अच्छा। वाह पं० चन्द्रदेवजी! क्या कहने हैं। आप तो चीज को आइने के समान जाहर कर देते हैं।

इन्द्र०—पं० चन्द्रदेवजी आज तो आपने भली-भाँति स्पष्ट कर दिया कि वृक्षों में जीव नहीं। सुषुप्ति के विषय में मुझे बहुत-सी शङ्काएँ थीं। वे सब दूर हो गईं। दो-चार शङ्काएँ शेष हैं।

चन्द्र०—उनको भी लेलेंगे। धीरे-धीरे सब हो जायेगा। आज हमको जल्दी जाना है। नमस्ते!

दसवीं वार्त्ता

वृक्षों का घटना बढ़ना आदि

इन्द्र०—वृक्ष और पशु-पक्षियों के शरीर में बहुत समानता है। मनुष्य को शरीर के ऊर्ध्वमूलं अधोशाखा कहा है, अर्थात् मनुष्य का शरीर ऐसा वृक्ष है, जिसकी जड़ ऊपर को शाखाएँ नीचे को।

चन्द्र०—यह ठीक है, परन्तु इतना सादृश नहीं है कि हम वृक्षों को सजीव मान सकें। सादृश तो संसार के सभी पदार्थों में कुछ न कुछ है ही, परन्तु उपमान एकांगी हुआ करता है। आपने जो मनुष्य के शरीर को ऊर्ध्वमूल बताया यह तो सादृश नहीं असमानता है। यहाँ तो उपमामात्र है।

इन्द्र०—देखिये जौं के बीज से जौं ही उपजते हैं, जैसे बिल्ली से बिल्ली उत्पन्न होती है, मुर्गे नहीं।

चन्द्र०—यह ठीक है।

कारण गुण पूर्वक कार्य गुणो दृष्टः॥

परन्तु न तो जौं चेतन है न जौं के माँ-बाप चेतन थे। न उनकी

Scanned by CamScanner

सन्तान चेतन होगी। आपने विज्ञान-परीक्षणालयों में लड़कों को क्रिस्टल (Crystal) या रवे बनाते देखा होगा।

इन्द्र०—हाँ? देखा है। विशेष पदार्थों के रवे विशेष आकृति के होते हैं।

चन्द्र०—वह घोल तो जड़ होता है, फिर रवों में वही आकृति कहाँ से आ जाती हैं? क्या उसमें जीव का सम्पर्क है?

इन्द्र०—नहीं।

चन्द्र०—ऐसे ही वृक्षों में भी क्यों नहीं समझ लेते। ईश्वर के नियमों का चमत्कार है। बिना बीज के भी तो वृक्ष उत्पन्न हो जाते हैं, जैसे अमरबेल के एक टुकड़े को काटकर किसी वृक्ष पर फेंक दो। थोड़े दिनों में वह समस्त वृक्ष पर फैल जायेगी। सहजन के वृक्ष की एक लकड़ी गाड़ दो, वृक्ष उग आवेगा। यह नहीं कहा जा सकता कि उस कटी हुई लकड़ी में जीव था। मनुष्य या पशु-पक्षी के वीर्य में जीव होता है, वही शरीर का निर्माण करता है। निर्जीव वीर्य शरीर को उत्पन्न नहीं कर सकता। सजीव प्राणियों का वीर्य उसी समय तक उत्पादक रहता है, जब वह उनके शरीरों से संयुक्त रहें। चने कई वर्षों तक घड़े में बन्द रह कर भी उत्पादक हो जाते हैं। क्या आप कह सकते हैं कि उनमें जीव वर्षों तक बिना विकास किये कैद रहे? चने के सूखे दाने सजीव हैं या निर्जीव? सजीव हैं तो इतने दिनों कैद का क्या अर्थ? निर्जीव है तो मानना पड़ेगा कि बिना जीव के भी वृद्धि होती है।

सेठ लल्लू०—यह जो कहा जाता है कि हरे वृक्ष को काटने से पाप लगता है। यह क्या बात है?

चन्द्र०—यदि इसमें हिंसा की बात होती तो मूली, गाजर, गोभी, हरे तो खाये जाते हैं। इनमें भी पाप होना चाहिए था। फलदार हरे वृक्ष काटने से वृक्ष को पीड़ा नहीं होती। हाँ मनुष्यों को अवश्य हानि होती है, क्योंकि वे फलों से वञ्चित रह जाते हैं। किसी के घर में आग लगा देना भी पाप है, इसलिए नहीं कि जड़ दीवारों को पीड़ा होती है, अपितु इसलिए कि इससे स्वामी को क्षति पहुँचती हैं। फलदार वृक्षों को नष्ट करने से मनुष्यों के हितकर पदार्थ नष्ट होते हैं। इसमें वृक्ष के सजीव होने का कोई प्रमाण नहीं है।

इन्द्र०—ऋग्वेद का एक मन्त्र है।

Scanned by CamScanner

ओषधीषु प्रतीतिष्ठा शर्रीरैः। (ऋ० १०।१६।३)

यहाँ तो स्पष्ट है कि ओषधियों की योनि प्राप्त कर।

चन्द्र०—पूरा मन्त्र पढ़िये—

इन्द्र०—**सूर्य चक्षुर्गच्छतु। वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवी च धर्मणा। अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शर्रीरैः।** (ऋ० १०।१६।३)

चन्द्र०—अब कहिये। क्या सूर्य, हवा, पृथिवी, अपः (जल) इन सबको चेतन मानेंगे?

इन्द्र०—नहीं।

चन्द्र०—तो स्पष्ट है कि यहाँ आधार आधेय का सम्बन्ध है, शरीर का नहीं। जीव एक योनि छोड़कर दूसरी योनि में कहाँ-कहाँ होकर जाता है। इसका यहाँ वर्णन किया है। पृथिवी या ओषधि आदि योनियाँ नहीं हैं। इसी प्रकार अन्य मन्त्रों में भी धोखा हो जाता है।

इन्द्र०—आप ठीक कहते हैं। वेद के प्रमाणों को समझने में सावधानी चाहिए।

चन्द्र०—मैं यहाँ शङ्कर स्वामी के वेदान्त दर्शन के भाष्य का एक उदाहरण चाहिए।

इन्द्र०—दीजिये?

चन्द्र०—देखिये—

'अन्याधिष्ठितेषु पूर्ववद भिलापात्'। —वेदान्त ३।१।२४

का भाष्य करते हुए शङ्कर स्वामी लिखते हैं—

त इह व्रीहियवा ओषधि वनस्पतयस्तिलमाषा इति जायन्ते। (छा० ५।१०।६)

प्रश्न यह था कि छान्दोग्य उपनिषद् के वाक्य में जो यह लिखा है कि जीव चावल जौं आदि वनस्पतियों से होकर गुजरता है, इसका क्या अर्थ है? क्या जौं चावल आदि योनियाँ हैं या योनि अलग हैं और वनस्पति आदि का संश्लेषमात्र होता है। जैसे यदि हम मोटर पर चढ़कर कहीं जाएँ तो मोटर योनि नहीं है। केवल संश्लेषमात्र है। यह दो विकल्प उठाकर श्री शङ्कर स्वामी पहले विकल्प का निराकरण करके संश्लेषमात्र को मानते हैं।

यथा वायुधूमादि भावोऽनुशयिनां तत् संश्लेषमात्रम्।

Scanned by CamScanner

जैसे वायु, धूम आदि से संश्लेषमात्र है, वैसे ही वनस्पति से भी। इससे 'सूर्य चक्षुर्गच्छति' का प्रमाण वृक्षों के जीव होने का पोषक नहीं। व्यासजी के सूत्र में तो 'अन्याधिष्ठितेषु' इतना ही है। न वनस्पति का उल्लेख है न व्रीहि, यव आदि का।

ल०त०—हमने सुना है कि अफ्रीका में एक ऐसा पेड़ है, जो चिड़ियों को खाता है। कहते हैं कि जब चिड़िया उसके निकट पहुँचती हैं तो उसकी शाखाएँ उन चिड़ियों को झट पकड़ लेती हैं और चिड़ियों को चूस कर उनके पञ्जर फेंक देती हैं। पं० चन्द्रदेवजी, इस विषय में आपकी क्या राय है।

चन्द्र०—लालाजी, अफ्रीका के उस वृक्ष में जीव होगा। भारतवर्ष के वृक्षों में तो जीव है नहीं। यहाँ तो चिड़ियाँ क्या चींटी को भी कोई वृक्ष नहीं खाता?

ला०त०—आप तो हँसी करते हैं।

चन्द्र०—हँसी क्या। लोग बिना सोचे बात का बतङ्गड़ कर देते हैं। मैंने वह वृक्ष देखा नहीं, परन्तु इतना मैं जानता हूँ कि भारतवर्ष में सजीव दीपक है, जो पतङ्गों को पकड़कर चूस लेते हैं और उनकी राख फेंक देते हैं। वर्षा ऋतु में हर एक दीपक के चारों ओर पतङ्गों की ठठरियाँ पड़ी मिलेंगी।

ला०त०—यह हँसी ही तो है। दीपक तो किसी को नहीं पकड़ते। पतङ्गें स्वयं उन पर टूट पड़ते और जलकर राख हो जाते हैं। उस वृक्ष में और दीपक में क्या समानता है?

चन्द्र०—समानता तो सोचने से प्रतीत होगी, चिड़ियां भी स्वयं ही वृक्ष पर जाती हैं। वृक्ष किसी को दौड़ कर नहीं पकड़ता।

ल०त०—पतङ्गें तो दीपक की रोशनी पर मोहित होकर आते हैं। रूप और लावण्य का शिकार हो जाते हैं।

चन्द्र०—प्रतीत होता है कि उस वृक्ष की गन्ध में भी कोई ऐसा आकर्षण होगा, जैसा भौंरे को पुष्प में होता है। उसमें चिड़ियां उधर को जाती होंगी और कोई चुम्बक जैसी शक्ति उनको खींच लेती होगी। पूर्णतया निरीक्षण करने से कोई न कोई बात निकल आयेगी। एक बात तो स्पष्ट है। जैसे दीपक सभी पतङ्गों को जला देता है, विवेचन नहीं करता, इसी प्रकार वृक्ष भी उन चिड़ियों का निर्वाचन नहीं करता। उसमें करने, न करने और उल्टा करने का ज्ञान नहीं हैं,

Scanned by CamScanner

अत: जीव के लक्षण नहीं घटते।

दूसरी बात यह है कि क्या संसार के समस्त वनस्पति सुषुप्ति अवस्था में हैं और वह वृक्ष जागृत में? यह कैसे?

राम शर०—श्री मगलानन्दपुरी ने अपने एक ग्रन्थ में एक ऐसे पेड़ का उल्लेख किया है जो नमाज पढ़ता है।

चन्द्र०—यह खुशखबरी मौलवी कबीर बक्शजी को सुनाइये कि मनुष्य तो क्या वृक्ष तक मुसलमानी धर्म को ग्रहण करने लगे। इस्लाम के आलमगीर धर्म होने का इससे अधिक क्या प्रमाण हो सकता है? क्यों मौलवी साहेब! आप तो कुत्ते बिल्लियों में भी रूह नहीं मानते। यहाँ वृक्ष तक नमाज पढ़ते हैं। हजरत मुहम्मद साहेब तो अरब में ही रहे। वहाँ के एक भी खजूर के वृक्ष ने नमाज पढ़ना नहीं सीखा! यह वृक्ष इतना बढ़िया मुसलमान है कि सुषुप्ति में भी नमाज पढ़ता है। श्री मङ्गलानन्दपुरी की पुस्तक को जाने दीजिए। उसमें बहुत-सी ऐसी बातें लिखी हैं कि उसकी आलोचना करना व्यर्थ है। मैंने बचपन में एक कहानी सुनी थी!

ठा० अभ्युदय०—वह क्या? बताइये, बताइये कहानी सुनने को जी चाहता है।

चन्द्र०—कहानी तो नहीं है। मैंने सुना था कि सूरजमुखी का फूल नित्य सूरज की ओर रहता है। प्रात:काल पूर्व की ओर और सायंकाल पश्चिम की ओर।

ला० तस०—क्या ऐसा है?

चन्द्र०—नहीं। ऐसा नहीं है। उनका नाम सूरजमुखी इसलिए है कि उस फूल की आकृति सूरज की किरणों से मिलती है। बीच में एक गोला होता है, उसके चारों ओर पंखड़ियाँ होती हैं, इसलिए उसको सूरजमुखी कहते हैं। इतनी बात से लोगों ने नमक मिर्च मिलाकर यह उड़ा दिया कि सूरजमुखी सूर्य की ओर ही मुख रखती है, मानो वह देखती रहती है कि सूरज किधर को है, उसी ओर मुड़ जाती है। बहुत से भ्रम इसी प्रकार उत्पन्न होते हैं। कुछ सचाई होती है और कुछ नमक मिर्च मिलकर कुछ का कुछ हो जाता है। यही बात इन वृक्षों पर भी लागू होती है।

इसके अतिरिक्त कवियों की कल्पना के लिए तो विस्तृत क्षेत्र है। वह तो उन वस्तुओं में भी जान डाल देते हैं, जिनमें ईश्वर भी नहीं

Scanned by CamScanner

डाल सकता। कलियों को रोते देखकर दरऔर दीवार रोने लगते हैं। उनको हँसते देखकर रात को तारे हँस उठते हैं। कवियों की कल्पनाओं के आश्रय से दार्शनिक उलझने नहीं सुलझ सकतीं। कवि अपना संसार स्वयं बनाते हैं। वह आदमी को शेर बनाकर उसके पूँछ लगा दें। उनके लिए यह एक साधारण-सी बात है।

ग्यारहवीं वार्त्ता

अण्डे और मछलियाँ

ठा० अभ्य०—वृक्ष तो हमारा मगज चाट गये। अब इनको छोड़िये। असली प्रश्न पर आइये।

ला० तसल्ली०—अच्छा तो हुआ। एक बात का समाधान हो गया। मांस-भक्षण के पक्ष में यह भी बड़ी भारी युक्ति पेश की जाती थी।

सेठ लल्लू०—कम से कम बहाना तो था ही।

राम०—वैसे बात तो स्पष्ट है। वृक्षों में जीव माननेवाले भी सुषुप्ति की आड़ में वृक्षों को बचा लेते हैं और न माननेवालों के लिए तो मार्ग खुला है।

इन्द्र०—यह भी अच्छा हुआ। मैं स्वयं इस विषय में बड़ा भ्रमात्मक था। शाक आदि खाये बिना भी नहीं बनती।

ला० त०—एक सज्जन कहते थे कि हिंसा अहिंसा का कोई प्रश्न नहीं है। ईश्वर ने मनुष्य को शाकाहारी बनाया है, अत: उसको शाक खाना चाहिए। सिंह को मासांहारी बनाया है, अत: इसको मांस खाना चाहिए।

चन्द्र०—भक्ष्य अभक्ष्य का निर्णय करने की यह भी एक विधि है, परन्तु **मनुष्य ही एक सदाचारी प्राणी है, इसलिए सदाचार के अन्तर्गत अहिंसा का बड़ा महत्त्व है।** यदि परमात्मा मनुष्य को मांसाहारी बनाता तो मनुष्य सदाचार सम्बन्धी उन्नति न कर सकता और अन्य प्राणियों को ईश्वर ने न वेद दिये न ज्ञान दिया। उनके लिए उपदेशों की आवश्यकता नहीं, परन्तु मनुष्य को तो फूँक-फूँक कर पग रखना है, अन्यथा यह भी शेर के समान जंगली और क्रूर हो जाए?

कबीर०—अगर खुदा अहिंसा को प्यार करता है तो उसने गोश्तखोर जानवर क्यों बनाये? इससे तो खुदा पर इल्जाम आता है।

Scanned by CamScanner

इन्द्र०—मौलवी साहेब, यह आक्षेप तो आपके धर्म पर भी वैसा ही लागू होता है, जैसा हमारे, क्योंकि शेर आदि न केवल पशुओं का ही मांस खाते हैं, अपितु मनुष्य का भी।

परन्तु बात यह है कि वे ही आत्मा सिंह, भेड़िये आदि की योनि में आते हैं, जो पहली योनि में क्रूर होते हैं। जीव अपने पुराने संस्कारों के अनुकूल ही दूसरी योनियों को प्राप्त होते हैं। ईश्वर किसी को क्रूर नहीं बनाता।

ईश्वर प्राणियों को मारता अवश्य है, क्योंकि वह उत्पन्न करनेवाला, पालन करनेवाला और मारनेवाला भी है, परन्तु वह अपने खाने या अपने स्वार्थ के लिए किसी को नहीं मारता। वह मारता इसलिए है कि दूसरी योनि में जीव अधिक उन्नति कर सकें।

कबीर०—तो क्या जो मनुष्य मर कर भेड़िया या शेर बनता है, वह उसकी बेहतर हालत है?

इन्द्र०—नहीं! लेकिन एक खूँखार आदमी खूँखार जानवर से ज्यादा खतरनाक है। शेर अपने पञ्जों से ही मारता है, आदमी एक गैस छोड़कर गाँव के गाँव साफ कर सकता है, इसलिए एक क्रूर मनुष्य यदि मरने के पश्चात् सिंह की योनि में आ जाए तो उसकी क्रूरता की सीमा संकुचित हो जाती है और वह कुछ सुधर सकता है। यह तो निश्चित बात है कि सिंह अपनी समस्त आयु में इतने जीव नहीं मारता, जितने मनुष्य। यदि आप किसी बकरे को मारकर उसके आत्मा को श्रेष्ठ योनि दे सकें तो आप पर हिंसा का पाप न लगे, परन्तु आप प्रथम तो बकरे को अपने स्वार्थ के लिए मारते हैं। दूसरे आपके लिए मरे हुए जीव के साथ उपकार करना असम्भव है, इसलिए आपके लिए बकरा मारना पाप है। ईश्वर तो मनुष्यों को भी मारता है, परन्तु स्वार्थवश नहीं।

ठा० अभ्य०—मौलवी साहेब, खुदा की बात छोड़िये। अपनी लीजिये। अच्छा मैं एक बात पूछता हूँ। अण्डा खाना पाप क्यों है? अण्डे में तो जान नहीं होती।

राम०—कौन कहता है कि अण्डे में जान नहीं होती! अण्डे में जान न होती तो बच्चा कैसे बनता और यह बच्चा अपने माता पिता के गुणों को किस प्रकार लाता। अण्डे के पानी को देखकर आप समझते हैं कि वह निर्जीव है, परन्तु जब उसीमें से बच्चा निकलता

Scanned by CamScanner

है तो उसके अङ्ग और उपाङ्ग अपने माँ-बाप के समान होते हैं। अण्डा खानेवाले, एक जीवन को नष्ट करके पाप के भागी होते हैं।

कबीर०—या खुदा। अण्डे भी न खाएँ।

इन्द्र०—मौलवी साहेब, आपको गोश्त की आदत पड़ी हुई है। आपने कभी हिंसा अहिंसा का विचार ही नहीं किया, इसलिए आश्चर्य होता है, परन्तु हम लोगों में तो अहिंसा का बड़ा विचार है।

ठा० अभ्यु०—कुछ ऐसे अण्डे भी होते हैं जो मुर्गी बिना मुर्गे के साथ मैथुन किये ही स्वयं देती हैं और उनमें से बच्चा नहीं होता। वह बेजान होते हैं। उनके खाने में तो कोई हानि नहीं।

चन्द्र०—हम नहीं जानते। वह आप जानें। यदि कोई निर्जीव अण्डा हो तो उसमें हिंसा का प्रश्न नहीं उठेगा, परन्तु उसे खाना चाहिए या नहीं यह और प्रश्न है?

ठा० अभ्यु०—यह क्यों?

चन्द्र०—देखिये! खाने का निषेध दो कारणों से होता है। एक वैद्यक सम्बन्धी कारणों से, दूसरे आचार-सम्बन्धी कारणों से। शुद्ध पवित्र दूध स्वास्थ्य के लिए उपयोगी होते हुए भी यदि चोरी का है तो त्याज्य है और विष चोरी का न होते हुए भी त्याज्य है। पहली अवस्था आचार-शास्त्र से सम्बन्ध रखती है और दूसरी वैद्यक से।

अब देखना चाहिए कि यदि मुर्गी बिना मुर्गे के संसर्ग के एक ऐसा अण्डा देती है जो निर्जीव है (मैं यह नहीं कह सकता कि ऐसा सम्भव है, मैं थोड़ी देर के लिए आपका विश्वास किये लेता हूँ) तो वह अण्डा क्या होगा? किसी प्राणी के शरीर में चार प्रकार के पदार्थ होते हैं। पहले वह जो उसके शरीर का वास्तविक अङ्ग हैं और शरीर को शक्ति पहुँचाते हैं। दूसरे वह जो मल के रूप में निकलते हैं और जो भिन्न-भिन्न मार्गों से मल, मूत्र आदि के रूप में निकलते रहते हैं। तीसरे वह जो शरीर में रोग के रूप में उत्पन्न होते हैं और जिनसे शरीर को हानि पहुँचती है। चौथे वह जो माता के शरीर में संतति का शरीर बनाते हैं, जैसे गर्भ या अण्डा। अब बताइये आपका बताया हुआ अण्डा किस कोटि में आता है। पहली कोटि में आ नहीं सकता, क्योंकि वह मुर्गी के शरीर का अङ्ग नहीं है। चौथी कोटि में भी नहीं आता, क्योंकि वह निर्जीव होने तथा बाप से उत्पन्न न होने के कारण सन्तति का शरीर नहीं है। अब दो कोटियाँ रह गई या तो वह मुर्गी

Scanned by CamScanner

के शरीर का मल है या रोग का अंश है। दोनों दशाओं में उसका खाना हितकर न होगा। मैं तो समझता हूँ कि अण्डे का चस्का जिनको लग गया है, वह उचित अनुचित का विचार न करके नये-नये बहाने निकालते रहते हैं। जो अण्डे खाते हैं, वह यह तो विवेक करते नहीं कि इसमें से बच्चा पैदा होगा या नहीं। जो बच्चे को मारकर खा जाएँ उनको अण्डे की क्या परवाह! उन्हें तो खाने से काम। वह तो जीभ के गुलाम हैं, फिर यदि कोई एक ऐसा विवेक रखे भी कि मैं केवल निर्जीव अण्डा ही खाऊँगा तो उसको बिना मुर्गों के मुर्गियाँ पालनी होंगी, फिर देखिये कितने अण्डे खाने को मिलते हैं? इसके अतिरिक्त दूसरे उसका अनुकरण करने के लिए अन्य प्रकार के अण्डे भी खायेंगे, इस प्रकार अण्डे खाने की प्रथा चल पड़ेगी। देखिये अण्डा खानेवाले समुदाय ने अण्डे पैदा करने के कारखाने बना रखे हैं, इस प्रकार आकस्मिक नहीं, अपितु सङ्गठित रूप से हिंसा की मशीन चलती रहती है। यह मानवी संस्कारों को मलिन करती है।

निशाकान्त मुकर्जी—हम तो बकरा नहीं खाता। इसमें पाप होता है। हम मछली खाते हैं।

इन्द्र०—बाबूजी! मछली वनस्पति है या पशु-पक्षी।

मु०—न वनस्पति, न पशु, न पक्षी।

इन्द्र०—सजीव है या निर्जीव?

मु०—सजीव तो है।

इन्द्र०—फिर हिंसा हुई या नहीं?

मु०—हिंसा तो हुई है, परन्तु वह तो जल तोरई है।

इन्द्र०—तोरई है या बैगन, यह प्रश्न नहीं। प्रश्न तो यह है कि जानदार है या नहीं।

मु०—जानदार तो है, परन्तु हम बङ्गालियों के लिए मछली माफ और जंगल में रहनेवालों के लिए हिरण माफ, किसी के लिए बकरा माफ, किसी के लिए गाय, किसी के लिए सुअर।

लाल०—यह तो बड़े मजे की बात है। आज तो मजा करलो। कल देखा जायेगा। पाप-पुण्य का प्रश्न उठाकर अपने मन को क्यों खिन्न किया जाए।

मु०—तो क्या मछली खाने में पाप है? फिर मछली का शरीर बना ही क्यों हैं।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—उसी काम के लिए, जिसके लिए आपका शरीर बना है। आपकी आँख क्यों बनी है?

मु०—देखने के लिए।

चन्द्र०—आपकी नाक?

मु०—सूँघने के लिए।

चन्द्र०—आपके कान?

मु०—सुनने के लिए।

चन्द्र०—आपको जबान?

मु०—चखने के लिए।

चन्द्र०—आपके शरीर के अन्य अङ्ग, रक्त, मांस, मज्जा, आदि?

मु०—शरीर में शक्ति उत्पन्न करने के लिए।

चन्द्र०—तो आप अपने शरीर में जितने अङ्ग उपाङ्ग बताते हैं, वे सब आपके उपयोग के लिए हैं?

मु०—हाँ।

चन्द्र०—शेर तो मनुष्य को अपना खाजा समझता है। यदि शेर से पूछा जाए कि मनुष्य अपने शरीर को किस लिए बनाता है? तो वह क्या उत्तर देगा?

कबीर०—वह तो कहेगा कि यदि मैं न खाऊँ तो मनुष्य के शरीर के बनने का उपयोग ही क्या है।

चन्द्र०—मौलवी साहेब! आप ठीक फरमाते हैं। प्रत्येक प्राणी अपने शरीर के अवयवों को अपने लिए बनाता है, दूसरों के लिए नहीं। बकरे ने अपने शरीर में जीभ इसलिए नहीं बनाई कि आप काटकर उसको पकाकर खा जाएँ। उसने तो इसलिए बनाई है कि वह उसके शरीर में उसकी आवश्यकता की पूर्ति करती रहे। इसी प्रकार मछली आदि प्राणी भी अपने शरीर को अपनी आवश्यकता के लिए बनाते हैं। यदि मैं बकरे की आँख निकाल लूँ तो मेरे लिए यह दो कौड़ी की भी नहीं। उसके शरीर पर लाख रुपये की चीज है। बकरा अपने शरीर का मांस अपनी शक्ति के लिए बनाता है, आपके खाने के लिए नहीं, यदि आप उसे खा लेते हैं तो उस बिचारे को उसकी आवश्यक वस्तु से वञ्चित रखते हैं, इसलिए दूसरे के मांस पर जीवित रहना अधर्म है। खटमलों से पूछो जो रात को चारपाई पर आपको

Scanned by CamScanner

काटने दौड़ते हैं या मच्छरों से पूछो जो आपको सोने नहीं देते। आपने दूध मलाई खाकर जो अपने शरीर में रुधिर उत्पन्न किया है, वह अपने लाभ के लिए या खटमलों और मच्छरों के लिए? जो भाव आपके हृदय में है, उन्हीं को दूसरों पर लागू कीजिए, धर्म और अधर्म का पता चल जाता है। कहा भी है कि जो चीज तुम अपने लिए पसन्द नहीं करते वह दूसरों के लिए पसन्द मत करो। यदि तुम पसन्द नहीं करते कि कोई तुमको पीड़ा दे तो तुम भी किसी को पीड़ मत पहुँचाओ, आचार का यह मुख्यतम नियम है। इसी पर समस्त धर्म की भित्ति खड़ी है।

मुकर्जी०—मेरी समझ में आ गया। मछली छोड़ दूँ क्या?

चन्द्र०—अवश्य।

मु०—अन्य बङ्गाली क्या कहेंगे?

चन्द्र०—अपनी आत्मा से पूछिए। यदि आप प्रचार करेंगे तो अन्य बङ्गालियों को भी आप पाप के गढ्ढे से बचा सकेंगे।

मु०—यह कठिन काम है।

चन्द्र०—धर्म पर चलना भी कठिन काम है।

मु०—देखिये! अच्छा कल से हम भी इस बहस में भाग लिया करेंगे।

चन्द्र०—अवश्य। आज वाद-प्रतिवाद को यहीं विराम दिया जाता है। नमस्ते।

ला० तसल्लीराम—एक प्रश्न रह जाता है! उसे और ले लीजिये। लोग कहते हैं कि पशु तो भोग योनि है। उसके मारने में क्या दोष?

चन्द्र०—यह एक ही कही? क्या भोग योनि को पीड़ा नहीं पहुँचती? और क्या उस पीड़ा का उत्तरदायित्व पीड़ा पहुँचानेवाले पर नहीं हैं।

तस०—भोग योनियाँ तो जेलखाने के समान हैं। उनको तो दु:ख भोगना ही है।

चन्द्र०—उसी योनि में या अन्यत्र?

तस०—उसी योनि में।

चन्द्र०—तो आप कौन हैं कि उस योनि से किसी को निकाल कर बाहर कर दें? यदि आप जेलखाने से किसी कैदी को भगा दें

Scanned by CamScanner

तो जानते हैं क्या होगा?

अभ्य०—आप भी जेल जायेंगे।

चन्द्र०—बस! ऐसा ही समझ लीजिए। अब तो चलिये। नमस्ते!

इन्द्र०—नमस्ते पण्डितजी, नमस्ते। आपके उपदेशों से तो हमको कई बातें नई मालूम हुईं।

अभ्युदय०—क्या कहना है? पण्डितजी की युक्तियाँ बहुत प्रबल होती हैं। अब तो मैं भी कुछ मानता जाता हूँ। चार दिन से मांस छोड़ रखा है, परन्तु अभी पक्का नहीं हुआ।

तसल्लीराम—पक्के तो पकाने से होते हैं। यदि यही गति रही तो कसाई हमारी जान को कोसेंगे।

चन्द्र०—अभी तो सैकड़ों पशु हमारी और कसाइयों दोनों की जान को कोस रहे हैं। अमानुषी भोजन को त्यागने के बिना हम मनुष्य नहीं बन सकते। दरिन्दे रहेंगे। अच्छा आज चलें। कल फिर!

सेठ लल्लूमल—नमस्ते! नमस्ते! मुकर्जी बाबू नमस्ते। आप भी आया करें और अपने मित्रों को भी लाया करें।

✿

बारहवीं वार्त्ता

मांस और सायंस

मुकर्जी०—पं० चन्द्रदेवजी! हम आज एक सायंस की बात कहना चाहते हैं।

चन्द्र०—कहिये बाबूजी! निःसंकोच कहिये।

मुक०—सायंसदां कहते हैं कि मांस में बड़ी-बड़ी अच्छी चीजें हैं।

चन्द्र०—हम कब इनकार करते हैं? मांस तो उन्हीं चीजों से बनता है, जिनको हम खाते हैं? जब हम अच्छी चीजें खाते हैं तो मांस में अच्छी चीजें हो जाती हैं।

मुक०—फिर आप मांस खाने का क्यों निषेध करते हैं? क्या आप सायंसदानों की बातों को नहीं मानते?

चन्द्र०—हम मानते हैं! सायंस केवल पदार्थों का विश्लेषण करती है। वह यह नहीं बताती कि किस पदार्थ को हम किस प्रयोग में लावें। पदार्थ विद्या और आचार शास्त्र में भेद है। मनुष्य के मांस में भी तो वही पदार्थ होते हैं? फिर क्या मनुष्य का मांस खाइयेगा? सायंस का

Scanned by CamScanner

अन्धा अनुकरण करके संसार शेर और भेड़िये के समान क्रूर और निर्दयी हो गया है। वह जानवरों को इसलिए पालता है कि उनको मार कर खा जाए! सुअर खानेवाले सुअरों को बादाम खिलाते हैं कि उनके मांस से स्वाद आ जाए। यदि नर हिंसा आरम्भ हो गई तो लोग मनुष्यों को भी उनका मांस खाने के लिए मोटा बनाया करेंगे और डाक्टर लोग उनको मोटा बनाने के लिए नुस्खे लिख दिया करेंगे।

बात यह है समस्त संसार पाँच तत्त्वों से बना है। मांस भी उन्हीं तत्त्वों से बना है। मलमूत्र में भी वही तत्त्व है, जो रक्त में या दूध में, परन्तु सभी पदार्थ भक्ष्य नहीं है।

एक और बात है। केवल विश्लेषण करने से किसी वस्तु के भोजन सम्बन्धी गुणों का पता नहीं चलता। बहुत-सी वस्तुओं का प्रभाव अलग-अलग और होता है और मिलकर और। भिन्न-भिन्न अनुपात से मिलकर और! इसलिए देखना यह है कि भक्ष्य पदार्थ में कौन-कौन गुण होने चाहिए। आपके आने से कई दिन पूर्व हम इस बात पर बातचीत कर चुके हैं। पदार्थ विद्या और आचार शास्त्र में बहुत भेद है? मनुष्य को इन दोनों शास्त्रों पर ध्यान रखना है। एक पर नहीं।

मुक०—उदाहरण!

चन्द्र०—लीजिये! दो स्त्रियों को लीजिये जो प्रायः एक-सी आयु और एक से स्वास्थ्य की हों। एक हो आपकी बहन और दूसरी स्त्री। किसी डॉक्टर से पूछिये कि मेरे सम्भोग के लिए कौन-सी उपयुक्त है? डॉक्टर क्या करेगा? वह उनके शरीरों की परीक्षा करेगा और अपना निश्चय दे देगा। डॉक्टर की डॉक्टरी यह नहीं बताती कि अमुक बहन है, अतः त्याज्य है। क्या आप ऐसे डॉक्टरों का अनुकरण करने के लिए तैयार हैं?

मौलवी कबीर०—तोबा! तोबा! क्या मिसाल दी है? मेरे जी को लग गई। पं० जी! आप ठीक कहते हैं, इन डॉक्टरों की बात मानें तो संसार कुत्ता बिल्ली ही हो जाए?

चन्द्र०—मौलवी साहेब! मैं डॉक्टरों की अवहेलना नहीं करता। जब हम रोगी हो जाते हैं तो इन्हीं का द्वार खट-खटाते हैं, परन्तु उनके क्षेत्र की सीमा है। डॉक्टरों ने अपनी सीमा का उल्लङ्घन करके संसार को पशु बना दिया है। यह बुरी बात है।

Scanned by CamScanner

ठा० अभ्यु०—डॉक्टर लोग तो बहुत से रोगों में गोश्त बता देते हैं।

चन्द्र०—इसका एक कारण है। लोगों में मांस-भक्षण की प्रवृत्ति बढ़ गई है। किसी पशु को मारना पाप ही नहीं समझा जाता, इसलिए डॉक्टरों की दृष्टि भी पशुओं पर जाती है। डॉक्टरी परीक्षणों के लिए लाखों पशुओं की नित्य हत्या हुआ करती है। यदि अहिंसा का प्रचार किया जाए तो डॉक्टर लोग अपने मस्तिष्क को अन्य ऐसे पदार्थों की खोजों में लगायें, जिनके ग्रहण करने में हिंसा भी न हो और रोग भी दूर हो जाएँ।

ठा० अभ्यु०—यह कैसे हो?

चन्द्र०—हो सकता है। मनोवृत्ति बदलने की जरूरत है, जितने जानवर हैं, उनके शरीर तो अन्ततोगत्वा वनस्पतियों से ही बनते हैं। वह वनस्पतियों से ही लिए गये होंगे। जो तत्त्व मूल वनस्पति में नहीं वह वनस्पति खानेवाले पशु के मांस में कहाँ से आया? यह तो सीधी बात है, जिसकी सचाई से कोई इनकार नहीं कर सकता? खोज की आवश्यकता है। जिस प्रकार चोर कमा कमाया धन चुरा लाता है और यह यत्न नहीं करता कि उन्हीं मार्गों का अवलम्बन करे, जिनसे साहूकार ने उस धन का उपार्जन किया है, इसी प्रकार डॉक्टर लोग भी पशुओं के मांस से यह पदार्थ ले लेते हैं, जो ओषधि का काम करते हैं। वह वनस्पतियों की खोज में परिश्रम नहीं करते, जिनको खाकर उन पशुओं ने अपने शरीर में उन विशेष पदार्थों का उपार्जन किया है। कल्पना कीजिये कि काड मछली का तेल विशेष रोगों की दवा है। प्रश्न यह है कि काड मछली आकाश से तो गिरती नहीं। न पृथ्वी को फाड़ कर निकलती है। वह भी अपना भोजन कहाँ से लेती है और उसी भोजन से वह अपना शरीर बनाती है। संसार में वह तत्त्व अन्य रूपों में भी पाये जाते हैं, परन्तु जिसको मछली मारने में ही आनन्द आता है, वह उन तत्त्वों की खोज में क्यों श्रम करेगा।

जिसको मिले यों, वह खेती करे क्यों?

सेठ लल्लू०—आपने बहुत अच्छा समझाया। मेरी समझ में आ गया।

राम०—आयुर्वेद में भी तो बहुत से मांसों का विधान है।

चन्द्र०—है अवश्य, परन्तु बहुत-सा ऊँटपटाङ्ग है। कोई वैद्य उनका प्रयोग नहीं करता। बड़े-बड़े वैद्य वनस्पति धातु तथा रसों से ही चिकित्सा करते हैं। आयुर्वेद में बहुत-सा तो लोगों ने मिला दिया

Scanned by CamScanner

है। भारतवर्ष में एक युग ऐसा आया, जिसमें वाममार्ग बढ़ गया। मद्य, मांस और मैथुन को छूट्टी मिल गई। उस समय स्वार्थियों ने बहुत से आर्ष ग्रन्थों को खराब किया। अन्य सूत्रों (गृह्यसूत्र आदि) में भी यही मिलावट की गई। वहाँ भी लिख दिया है कि अमुक मांस खिलावे तो अमुक फल मिले इत्यादि।

ला० तसल्ली०—मैंने सुना है कि आजकल बहुत से डॉक्टर मांसाहार के विरुद्ध होते जाते हैं।

चन्द्र०—ठीक है। जिन्होंने निष्पक्ष होकर अन्वेषण किया है, उनमें से बहुत से डॉक्टर मांस के विरुद्ध हैं। हम यहाँ थोड़े-से उदाहरण देते हैं—

(१) लन्दन में एक प्रसिद्ध डॉक्टर हुए हैं, डॉक्टर एलेक्जैण्डर हेग (Dr. Alexander Haig)। आप यूरिक एसिड (Uric Acid) के विषय में प्रमाण समझे जाते हैं। आपने एक पुस्तक लिखी है 'यूरिक एसिड इज ए फेक्टर इन दी कौजेशन ऑफ डिजीज' (अर्थात् यूरिक एसिड से रोग उत्पन्न होते हैं) इस पुस्तक में उन्होंने दिखाया है कि मांस में यूरिक एसिड बहुत बनती है और इससे कई प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। वह लिखते हैं कि मैं मिगरेन (Migrane) रोग से बीमार था। १८८२ ई० में निराश हो चुका था। बहुत-सी दवाएँ खाईं। कुछ फल नहीं निकला। अन्त में मैंने मांस छोड़ दिया। पहले दूध और मछली पर गुजर की, फिर दूध और पनीर खाने लगा। मैंने पहले अपने ऊपर भोजन-सम्बन्धी अनेकों परीक्षण किये, परन्तु सब में विफलता रही। अब मैं मांस नहीं खाता और अच्छा हूँ। मैं मांस नहीं खाता, क्योंकि बिना मांस के मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। वह लिखते हैं—
A certain form of headache is made worse by eating meat, meat soup, of meat extracts and is cured or prevented by abstaining from them,

अर्थात् "एक प्रकार का सिर का दर्द मांस या शोरबा या मांस से बनाई हुई ओषधियों से बढ़ जाता है और मांस छोड़ने से चङ्गा हो जाता है।"

ला० तसल्लीराम—यह तो आपने एक ही कही। मैं कई लोगों को जानता हूँ जो मांस खाते हैं और सिर के दर्द से परेशान रहते हैं। डॉक्टर उनको मांस खाने की सलाह नहीं देते।

चन्द्र०—भाई, बात यह है कि आजकल मांस-भक्षण फैशन हो

Scanned by CamScanner

गया है और मांस छोड़नेवाले असभ्य, ग्रामीण और मूर्ख समझे जाते हैं। डॉक्टरों की क्या पूछते हो। मारते-काटते, चीरते-फाड़ते इनकी प्रवृत्ति निर्दयी बन गई है। आजकल वही बड़ा आदमी समझा जाता है, जो मांस खाए, शराब पिये और सिगरेट का प्रयोग करे। यह डॉक्टर अन्वेषण तो करते नहीं। लकीर के फकीर होते हैं, परन्तु जिन डॉक्टरों ने स्वतन्त्र खोज की है, वे मांस के विरोधी हो गये हैं।

स्काटलेण्ड का डॉक्टर बेल (Dr. Bell) कहता है कि सरतान या केंसर रोग मांस खाने से बढ़ जाता है और वह अपने रोगियों का इलाज केवल मांस छुड़ाने द्वारा ही करता है। उसने उन रोगियों के रक्त के चित्र दिये हैं, जिनका रुधिर मांस छोड़ देने से शुद्ध हो गया और वह कैंसर रोग से मुक्त हो गये।

डॉक्टर हेग ने एक पुस्तक लिखी है। इसका नाम है डाइट एण्ड फूड (Diet and food) या 'पथ्य और भोजन'। इस पुस्तक में उन्होंने शक्तिवर्धक और उत्तेजक पदार्थों में भेद किया है। वह लिखते हैं कि उत्तेजना और चीज है और शक्ति और चीज। उत्तेजना भभकते हुए तेल (Explosive oil) के समान है और शक्ति धीरे-धीरे जलते हुए तेल के समान। वह लिखते हैं कि शाकाहार से शक्ति उत्पन्न होती है और मांसाहार से उत्तेजना। मांसाहारी पहले तो शक्ति का अनुभव करता है, परन्तु शीघ्र ही थक जाता है। शाकाहारी अपनी शक्ति का धैर्य के साथ प्रयोग करता रहता है। उन्होंने इस प्रकार के कई परीक्षणों का उल्लेख किया है। जून १८९९ में क्विटा में एक परीक्षण रस्साकशी पर किया गया। दो दलों में से एक वह थे जो बहुत ही कम खाते थे, अर्थात् सिख और दूसरा दल अंग्रेजी सिपाहियों का था जो अधिकतर मांस पर ही रहते थे। उन्होंने लिखा है कि अंग्रेजों के हाथ छिल से जाते थे और उन्हें रस्सा छोड़ना पड़ता था, सिख, बराबर रस्सा खींचते रहते थे।

२९ जून, १८९८ के डैली न्यूज में बर्लिन के सम्वाददाता ने एक संवाद भेजा जिसका शीर्षक था "शाकाहार की विजय" १४ मांसाहारी और आठ शाकाहारियों में ६० मील पैदल चलने की बाजी लगी। सब शाकाहारी स्वास्थ्यपूर्वक स्थान पर पहुँच गये। जो प्रथम रहा उसने १४॥ घण्टों में यात्रा पूरी की। सबसे पिछले शाकाहारी के एक घण्टे पीछे पहला मांसाहारी पहुँचा। वह नितान्त थक गया था। शेष सब ३५

Scanned by CamScanner

मील के पश्चात् ही थक गये थे।

१९०२ में १८ शाकाहारी और १४ मांसाहारी ड्रस्डन से बर्लिन चले। उनमें से दस शाकाहारी और ३ मांसाहारी नियुक्त स्थान पर पहुँच सके। जो सबसे प्रथम था, उसका नाम कार्ल मैंन (Karl Man) था। यह सबसे पहले मांसाहारी से ७ घण्टे पहले पहुँचा था। उसको एक ४९ वर्ष के मनुष्य ने जो ३८ वर्ष से शाकाहारी रहा था। चार घण्टे पहले पहुँचकर हरा दिया था।

डॉक्टर हेग के परीक्षणों को पढ़कर मुझे भारतवर्ष की याद आ जाती है। यद्यपि यूरोप के लोगों को बड़ा आश्चर्य होता है कि कोई ऐसा भी देश है, जहाँ मास और मद्य से परहेज करनेवाले लोग रहते हैं, परन्तु हमारा प्रतिदिन का अनुभव है कि करोड़ो भारतीयों ने कभी आयु भर मांस या शराब छुई तक नहीं। आजकल की नैतिक परिस्थिति के कारण इनमें से बहुत को दो समय का खाना तक नहीं मिलता, परन्तु फिर भी बहुत से शाकाहारी बुड्ढे मांसाहारी युवकों से अधिक कार्य कर लेते हैं। एक विचित्र बात आप यह देखेंगे कि युवा अवस्था में तो यह सम्भव है कि मांसाहारी शाकाहारियों की अपेक्षा हृष्ट-पुष्ट दिखाई पड़े, परन्तु प्रथम तो उनकी काम करने की शक्ति इतनी नहीं होती, दूसरे बुढ़ापे में मांसाहारी में कोई शक्ति नहीं रहती। वह अधिक बुड्ढा जँचने लगता है और उसके अङ्गों में राशा या हिलने का रोग हो जाता है। शाकाहारी दुबले-पतले बुड्ढे भी अधिक काम कर सकते हैं। इसका कारण मद्य और मांस दोनों हैं। मांस और मद्य का तो साथ है। मांस खाइये तो मद्य को जी चलेगा। मद्य पीजिये तो मांस की आवश्यकता पड़ेगी। सायंसदा लोगों ने इसका भी कारण बताया है। डॉक्टर हेग का कहना है कि अफीम, कोकेन और शराब की भाँति मांस भी उत्तेजक पदार्थों की इच्छा करता है और अन्त में यह दशा हो जाती है कि अधिक से अधिक उत्तेजक पदार्थ भी उत्तेजना नहीं दे सकता और सिर दर्द, उदासी और निर्बलता सताने लगती है। शराब छुड़ाना हो तो मांस छोड़ दो।

कबीर०—मुसलमान मांस खाते हैं, शराब नहीं पीते।

चन्द्र०—यह ठीक है कि मुसलमानों के धर्म में शराब पीना पाप लिखा है और इसलिए धर्मात्मा मुसलमान शराब से परहेज करते हैं, परन्तु मांस खाने के कारण इस्लामी मुल्कों से शराब बिल्कुल उड़ाई

Scanned by CamScanner

नहीं जा सकी। इसके लिए भी भारतवर्ष पर आप दृष्टि डालें। भारतवर्ष में जो लोग मांस नहीं खाते वह शराब भी नहीं पीते। मांस खाते ही शराब का चस्का लगने लगता है। जर्मनी में शराब छुड़ाने का सबसे उत्तम उपाय सोचा गया है कि मांस कम कर दिया जाए।

डॉक्टर हेग ने एक और तात्विक बात लिखी है। वह कहते हैं कि मांस और मद्य के सेवन से मनुष्य के स्नायु इतने दुर्बल हो जाते हैं कि वह जीवन से निराश होकर आत्महत्या करने पर बाधित हो जाता है। वह लिखते हैं—

There is more suicide in England, where most meat is eaten and beer is drunk, and less in Scotland, where less meat taken......suicide is believed to be increasing in England and so is the meat eaten per head of population. (Uric Acid, p. 295)

अर्थात् ''इङ्गलैण्ड में मांस और शराब का अधिक प्रयोग है, अतः इङ्गलैण्ड में आत्म-हत्या बहुत होती है। स्काटलैण्ड में कम है, क्योंकि वहाँ मांस खाते कम हैं। इङ्गलैण्ड में मांस अधिक खाया जाता है और आत्म-हत्या भी बहुत होने लगे हैं।''

म०—वाह पं० जी, आपने तो इस विषय का अच्छा अध्ययन किया है। मैं तो समझता था कि आप कोरे पण्डित ही हैं।

चन्द्र०—बाबूजी मुझे आश्चर्य होता है कि आप पढ़े-लिखे लोग संसार भर की बातें जानने का यत्न करते हैं और उन बातों को नहीं जानते जिस पर आपका जीवन निर्भर है। मांस, मद्य और मैथुन यह तीन ऐसी चीजें हैं, जिनसे मनुष्य में उत्तेजकता बढ़ती और उसके स्नायु दुर्बल हो जाते हैं। बात संस्थान (Nervous System) बिगड़ जाता है और निराशा दबा लेती है। आजकल मांस और मद्य का रिवाज बढ़ता जा रहा है और सिनेमा और थियेटर उत्तेजकता उत्पन्न करके मैथुन की प्रवृत्ति भी बढ़ा रहे हैं, इसलिए आत्म-हत्या बढ़ती जाती है। आन्तरिक प्रफुल्लता और तेज तो चला गया। शराब और मांस के द्वारा शक्ति लाने का यत्न किया जाता है। इसी से हानि होती है।

मु०—हाँ ठीक तो प्रतीत होता है। अच्छा आज तो सारा समय डॉक्टर हेग ने ले लिया। अब चलिये मैं डॉक्टर हेग की पुस्तकें पढ़ूँगा।

चन्द्र०—मुझसे ले लीजिये। नमस्ते!

Scanned by CamScanner

तेरहवीं वार्त्ता

आर्यसमाज की मांस पार्टी

ठा० अभ्यु०—पं० चन्द्रदेवजी, कल हमारी बैठक में आपके इस वाद-प्रतिवाद की बात चल पड़ी। एक मित्र आर्यसमाज के बड़े विरोधी हैं। वे कहने लगे कि आर्यों में तो स्वयं दो पार्टियाँ हैं, एक घास पार्टी और दूसरी मांस पार्टी। इनको क्या अधिकार है कि मांस का खण्डन करें। मुझे तो मालूम नहीं। आप बताइये कि सच्चाई क्या है?

सेठ०—हाँ! अपने राम को भी ऐसा ही सुनाई दिया है। मुझे मांस से तो घृणा है, परन्तु मैं आर्यसमाजियों के परस्पर झगड़ों को पसन्द नहीं करता।

चन्द्र०—आज तो हमारा विचार था कि अन्य डॉक्टरों की राय को बताया जावे।

ला०—तो क्या आप अपने घर की बुराई को इस बहाने छिपाना चाहते हैं।

चन्द्र०—नहीं! नहीं! प्रसङ्गवश वह भी आना ही था। सत्य बात कहने और सुनने में क्या सङ्कोच? यदि आपको ऐसी ही आशङ्का है तो आज इसी बात को स्पष्ट कर दूँ। डॉक्टरों के मत फिर लिए जाएँगे। इस विषय में बहुत-सी भ्रान्तियाँ हैं।

कबीर०—साफ-साफ कहिये। गोलमोल बात से काम नहीं चलेगा।

चन्द्र०—यह ठीक है कि किसी समय पंजाब के कुछ मांसाहारी और कुछ शाकाहारी आर्यों में वैयक्तिक कारणों से झगड़ा हो गया और मांस-भक्षण के सिर पड़ा। अब भी दो पार्टियाँ हैं। एक गुरुकुल पार्टी और एक कॉलेज पार्टी, परन्तु यह गलत है कि कॉलेज पार्टी के सब लोग मांसाहारी हैं या थे। या गुरुकुल पार्टी में कोई भी मांस नहीं खाता। पंजाब में मांस का चलन बहुत दिनों से चला आता है। उनको मांस की चाट पड़ गई है। उनका मुसलमानों से सम्पर्क बहुत अधिक रहा है, अतः उनको मांस से घृणा भी कम रही है। आर्यसमाज के प्रचार ने मांस-भक्षण में बहुत कमी कर दी है, परन्तु अभी इसका समूल नाश नहीं हो सका है। किसी बात पर परस्पर झगड़ा हो गया था और कुछ लोगों ने मांस खानेवालों के हाथ से आर्यसमाज की संस्थाओं का प्रबन्ध छीनना चाहा। इसी पर झगड़ा बढ़ गया और कुछ व्यक्तियों ने जो मांस-भक्षण से प्रेम रखते थे यह सिद्ध करना चाहा

Scanned by CamScanner

कि मांस-भक्षण वेद-विहित है। इस पर कुछ पुस्तकें भी लिखी गईं, परन्तु यह कहना सर्वथा गलत है कि किसी सङ्गठित पार्टी ने मांस-भक्षण को धर्म बताया हो।

ला० तसल्ली०—यह तो स्पष्ट है कि कोई मांस पार्टी नहीं। यदि किसी में वैयक्तिक त्रुटि है तो दूसरी बात है।

चन्द्र०—यही मेरा कहना है। हमको बड़ा खेद है कि हम में दो पार्टियाँ हैं, इससे हमारे सङ्गठन में कमी आती है और दूसरों को हँसी उड़ाने का अवसर मिलता है, परन्तु जहाँ तक मांस के भक्ष्य होने का प्रश्न है, सभी आर्यसमाजी एक है और इसके विरोधी हैं।

ठा० अभ्यु०—इसमें स्वामी दयानन्दजी की क्या राय है?

चन्द्र—स्वामी दयानन्द मांस को भक्ष्य नहीं समझते हैं, वेद-विरुद्ध समझते हैं और पाप समझते हैं और हानिकारक समझते हैं। वैदिक साहित्य में जहाँ कहीं मांस का उल्लेख है, वह प्रक्षिप्त है या भ्रममूलक वेद भाष्यकारों की अविद्या और स्वार्थ के कारण है। महर्षि का मन्तव्य है—

१. मद्य मांसादि सेवन से अलग रहें।

(सत्यार्थप्रकाश समु० २, पृष्ठ ३९, कलकत्ता संस्करण विक्रमाब्द १९८०)

२. ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी मद्य, मांस, गन्ध, माला....आदि कुकर्म को सदा छोड़ देवें। (स०प्र०समु० ३, पृष्ठ ५९)

३. जब मांस का निषेध है तो सर्वदा ही निषेध है।

(स०प्र०समु० ४, पृष्ठ १५२)

४. (संन्यासी) मद्य मांसादि वर्जित होकर....सदा विचरता रहे।

(स०प्र०समु० ५, पृष्ठ १६३)

५. जैसे सिंह व मांसाहारी हृष्ट-पुष्ट पशु को मार कर खा लेते हैं, वैसे (राष्ट्री विशमत्ति) स्वतन्त्र राजा प्रजा का नाश करता है।

(स०प्र०समु० ६, पृष्ठ १७६)

६. जो लोग मांस-भक्षण और मद्यपान करते हैं, उनके शरीर और वीर्यादि धातु भी दुर्गन्धादि से दूषित होते हैं।

(स०प्र०समु० १०, पृष्ठ ३५१)

Scanned by CamScanner

७. मद्यमांस का ग्रहण कदापि भूल कर भी न करें।

(स०प्र०समु० १०, पृष्ठ ३५१)

८. मद्य-मांसाहारियों के हाथ के खाने में आर्यों को भी मद्य-मांसादि खाना-पीना अपराध पीछे लग पड़ता है।

(स०प्र०समु० १०, पृष्ठ ३५४)

९. मद्य-मांसाहारी म्लेच्छ कि जिनका शरीर मद्य-मांस के परमाणुओं ही से पूरित है, उनके हाथ का न खावें।

जिसमें उपकारी प्राणियों की हिंसा, अर्थात् जैसे गाय की एक पीढ़ी में चार लाख पचहत्तर सहस्र छः सौ मनुष्यों को सुख पहुँचता है, वैसे पशुओं को न मारें, न मारने दें। जैसे किसी गाय के बीस सेर और किसी से दो सेर प्रतिदिन होवे उसका मध्य भाग ग्यारह सेर प्रत्येक गाय से दूध होता है, कोई गाय अठारह और कोई छः महीने तक दूध देती है, उसका मध्य भाग बारह महीने हुए। अब प्रत्येक गाय के जन्म भर के दूध से २४९६० (चौबीस सहस्र नौ सौ साठ) मनुष्य एक बार में तृप्त हो सकते हैं। उसके छः बछियाँ छः बछड़े होते हैं, उनमें से दो मर जाएँ तो दश रहें, उनमें से पाँच बछड़ियों के जन्म भर के दूध को मिलाकर १२४८०० (एक लाख चौबीस सहस्र आठ सौ) मनुष्य तृप्त हो सकते हैं। अब रहे पांच बैल के जन्म भर में ५००० (पाँच सहस्र) मन अन्न न्यून से न्यून उत्पन्न कर सकते हैं। उस अन्न में से प्रत्येक मनुष्य तीन पाव खावे तो अढ़ाई लाख मनुष्यों की तृप्ति होती है। दूध और अन्न मिला ३७४८०० (तीन लाख चौहत्तर सहस्र आठ सौ) मनुष्य तृप्त होते हैं। दोनों की संख्या मिला के एक गाय की पीढ़ी में ४७५६०० (चार लाख पचहत्तर सहस्र छः सौ) मनुष्य एक बार पालित होते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ाकर लेखा करें तो असंख्यात मनुष्यों का पालन होता है। इससे भिन्न गाड़ी सवारी भार उठाने आदि कर्मों से मनुष्यों के बड़े उपकार होते हैं। तथा गाय दूध में अधिक उपकारक होती है और जैसे बैल उपकारक हैं, वैसे भैंसे भी हैं, परन्तु गाय के दूध घी से जितनी बुद्धि वृद्धि से लाभ होते हैं, उतने भैंस के दूध से नहीं, इससे मुख्योपकारक आर्यों ने गाय को गिना है और जो कोई अन्य विद्वान् होगा वह भी इसी प्रकार समझेगा। बकरी के दूध से २५९२० (पच्चीस सहस्र नौ सौ बीस) आदमियों का पालन होता है, वैसे हाथी, घोड़े, ऊँट, भेड़, गदहे आदि से भी

Scanned by CamScanner

बड़े उपकार होते हैं। इन पशुओं के मारनेवालों को सब मनुष्यों की हत्या करनेवाला जानियेगा। देखो जब आर्यों का राज्य था तब ये महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे तभी आर्यावर्त्त व अन्य भूगोल देशों में बड़े आनन्द से मनुष्य आदि प्राणी वर्तते थे, क्योंकि दूध, घी, बैल आदि पशुओं की बहुताई होने से अन्न रस पुष्कल प्राप्त होते थे। जबसे विदेशी मांसाहारी इस देश में आके गौ आदि पशुओं के मारनेवाले मद्यपानी राज्याधिकारी हुए हैं तब से क्रमशः आर्यों के दुःख की बढ़ती होती जाती है। (स०प्र०समु० १०, पृष्ठ ३५५)

१०. प्रश्न—जो सभी अहिंसक हो जाएँ तो व्याघ्रादि पशु इतने बढ़ जाएँ कि सब गाय आदि पशुओं को मार खाएँ। तुम्हारा पुरुषार्थ ही व्यर्थ हो जाए।

उत्तर—यह राजपुरुषों का काम है कि जो हानिकारक पशु वा मनुष्य हों, उनको दण्ड देवें और प्राण से भी विमुक्त कर दें।

प्रश्न—फिर क्या उनका मांस फेंक दें?

उत्तर—चाहे फेंक दें। चाहे कुत्ते आदि मांसाहारियों को खिला देवें वा जला देवें। अथवा कोई मांसाहारी खावे तो भी संसार की कुछ हानि नहीं होती। जितना हिंसा और चोरी विश्वासघात, छल, कपट आदि से पदार्थों को प्राप्त होकर भोग करना है, वह अक्ष्म्य और अहिंसा धर्मादि कर्मों से प्राप्त होकर भोजनादि करना भक्ष्य है।

(स०प्र०समु० १०, पृष्ठ ३५५)

११. जब ईसाई मुसलमान आदि मत-मतान्तर चले, आपस में वैर विरोध हुआ, उन्होंने मद्यपान गोमांसादि खाना पीना स्वीकार किया, उसी समय भोजनादि में बखेड़ा हो गया।

(स०प्र०समु० १०, पृष्ठ ३३०)

१२. मद्यमांस सेवन, बाल्यावस्था में विवाह और स्वेच्छाचारादि दोष बढ़ जाते हैं। (स०प्र०समु० १०, पृष्ठ ३६६)

१३. पश्चात् जो विषयासक्त हुए तो मांस मद्य का सेवन गुप्त-गुप्त करने लगे। (स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ३७५)

१४. जो वेद-विरुद्ध महा अधर्म के काम हैं, उन्हीं को श्रेष्ठ वाममार्गियों ने माना। मद्य, मांस, मीन अर्थात् मच्छी।

(स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ३७६)

१५. पश्चात् एक पात्र में मद्य भर के मांस और बड़े आदि एक

Scanned by CamScanner

थाली में धर रखते हैं। (स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ३७७)

१६. यज्ञ में मांस खाने में दोष नहीं ऐसी पामरपन की बातें वाममार्गियों ने चलाई हैं। उनसे पूछना चाहिए कि जो वैदिकी हिंसा न हो तो तुझे और तेरे कुटुम्बियों को मारके होम कर डालें तो क्या चिन्ता है? मांस-भक्षण करने, मद्य पीने, पर-स्त्रीगमन करने में दोष नहीं है, यह कहना छोकड़ापन है। (स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ३७९)

१७. क्योंकि बिना प्राणियों के पीड़ा दिए मांस प्राप्त नहीं होता और विना अपराध के पीड़ा देना धर्म का काम नहीं।

(स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ३७९)

१८. प्रश्न—यज्ञकर्त्ता कहते हैं कि यज्ञ करने से यजमान और पशु स्वर्ग तथा होम करके फिर पशु को जिन्दा करते थे, यह बात सच्ची है या नहीं?

उत्तर—नहीं, जो स्वर्ग को जाते हों तो ऐसी बात करनेवाले को मार के होम कर स्वर्ग में पहुँचाना चाहिए, या उसके प्रिय माता-पिता, स्त्री और पुत्रादि को मार के होम कर स्वर्ग में क्यों नहीं पहुँचाते? वा वेदी में से पुनः क्यों नहीं जिला देते?

(स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ३८०)

१९. दुष्ट पुजारियों को धन देते हैं, वे उस धन को वेश्या, परस्त्रीगमन, मद्य, मांसाहार, लड़ाई बखेड़ों में व्यय करते हैं, जिससे दाता का सुख का मूल नष्ट होकर दुःख होता है।

(स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ४२१)

२०. इसमें से वाममार्गी बड़े भारी अपकारी हैं.......मांस आदि का होम करने लगते हैं...........मद्य-मांसादि यथेष्ट खाते-पीते .....जो कोई बैरवी चक्र में जावें मद्य-मांस न पीवें न खावें उसको मारकर होम कर देते हैं। उनमें जो अघोरी होता है, वह मृत मनुष्य का भी मांस खाता है। (स०प्र०समु० ११, पृष्ठ ४७०,७१,७२)

२१. और जो मांस खाना है, वह भी उन्हीं वाममार्गी टीकाकारों की लीला है, इसलिए उनको राक्षस कहना उचित है, परन्तु वेदों में कहीं मांस खाना नहीं लिखा। (स०प्र०समु० १२, पृष्ठ ५४५)

२२. परन्तु बौद्धों में वाममार्गी मद्य-मांसाहारी बौद्ध हैं, उनके साथ जैनियों का विरोध है।...... (स०प्र०समु० १२, पृष्ठ ५५८)

२३. इनका दया धर्म कथन मात्र है और जो है सो क्षुद्र जनों

Scanned by CamScanner

और पशुओं के लिए है, जैन भिन्न मनुष्यों के लिए नहीं।

(स०प्र०समु० १२, पृष्ठ ५८९)

२४. क्या एक को प्राण कष्ट देकर दूसरों का आनन्द कराने से दयाहीन ईसाइयों का ईश्वर नहीं है? जो माता-पिता एक लड़के को मरवा कर दूसरे को खिलावें तो महापापी नहीं हो? इसी प्रकार यह बात है, क्योंकि ईश्वर के लिए सब प्राणी पुत्रवत् हैं। ऐसा न होने से इनका ईश्वर कसाईवत् काम करता है और सब मनुष्यों को हिंसक भी इसी ने बनाया है, इसीलिए ईसाइयों का ईश्वर निर्दय होने से पापी क्यों नहीं?

(स०प्र०समु० १३, पृष्ठ ६४१)

२५. जिनका ईश्वर बछड़े का मांस खावे उसके उपासक गाय बछड़े आदि पशुओं को क्यों छोड़ें? (स०प्र०समु० १३, पृष्ठ ६४३)

२६. 'मांसाहारिण: कुतो दया'। जब ईसाइयों का ईश्वर मांसाहारी है तो उसको दया करने से क्या काम है?

(स०प्र०समु० १३, पृष्ठ ६५३)

२७. जब ईसाइयों का खुदा भी बैलों का बलिदान लेवे तो उसके भक्त गाय के बलिदान की प्रसादी से पेट क्यों न भरें?

(स०प्र०समु० १३, पृष्ठ ६५६)

२८. तनिक विचारिये, कि बैल को परमेश्वर के आगे उसके भक्त मारें और वह मरवावे और लोहू को चारों ओर छिड़कें, अग्नि में होम करें, ईश्वर सुगन्ध लेवे, भला यह कसाई के घर से कुछ कमती लीला है?

(स०प्र०समु० १३, पृष्ठ ६५८)

२९. भला कपोत के बच्चे का गला मरोड़ने से बहुत देर तक तड़फता होगा तब भी ईसाइयों को दया नहीं आती।

(स०प्र०समु० १३, पृष्ठ ६६०)

३०. भला कोई मनुष्य एक लड़के को मरवाये और दूसरे लड़के को उसका मांस खिलावे ऐसा कभी हो सकता है? वैसे ही ईश्वर के मनुष्य और पशु-पक्षी आदि सब जीव पुत्रवत् है।

(स०प्र०समु० १३, पृष्ठ ६६०)

३१. इसाई आदि मुसलमान, गाय आदि के गले काटने में ''बिसमिल्लाह'' इस वचन को पढ़ते हैं। जो यही उसका पूर्वोक्त अर्थ है तो बुराइयों का आरम्भ भी परमेश्वर के नाम पर मुसलमान करते हैं।

(स०प्र०समु० १४, पृष्ठ ७०४)

Scanned by CamScanner

३२. जिस वस्तु से अधिक उपकार होवे। उन गाय आदि के मारने का निषेध न करना जानो हत्या कराकर खुदा जगत् का हानिकारक है, हिंसा रूप पाप से कलङ्कित भी हो जाता है।

(स०प्र०समु० १४, पृष्ठ ७२१)

✿

चौदहवीं वार्त्ता

डॉक्टरों की रायें

ठा० अभ्यु०—आप अन्य डाक्टरों की रायें देनेवाले थे?

चन्द्र०—हाँ! लीजिये। अमेरिका के येन यूनीवर्सिटी के डाक्टर रसल एच चिटिंडन, पी०एच०डी०, एल-एल०डी०, एस-सी०डी० ने मांस-भक्षण के विषय में बहुत से परीक्षण किये हैं, उनकी पुस्तकें देखने से ज्ञात होता है कि उन्होंने बहुत से प्रचलित भ्रमों का उच्छेदन किया है। उदाहरण के लिए लोग कहा करते हैं कि मांस में प्रोटीन बहुत है और प्रोटीन से हमारे शरीर की पुष्टि होती है। डाक्टर चिटिंडन का कहना है कि यद्यपि प्रोटीन की आवश्यकता है तथापि दो बातें याद रखनी चाहिएँ। प्रथम तो आवश्यक प्रोटीन शाकाहार से मिल सकती है, दूसरे आवश्यकता से अधिक प्रोटीन अत्यन्त हानिकारक है। बहुत से लोग प्रोटीन के ग्रहण में अति कर देते हैं और उनसे शरीर को बहुत हानि पहुँच जाती है। आप उनकी पुस्तक 'फिजियोलोजीकल इकोनमी इन नेचर' (Physiological Economy in Nature) पढ़िये। उसमें उन्होंने बहुत से परीक्षणों का उल्लेख किया है, जो उन्होंने अपने ऊपर, अपने साथी डाक्टरों के ऊपर और अन्यों के ऊपर किये हैं। इनसे स्पष्ट हो जाता है कि मांस-भक्षण शरीर के लिए हानिकारक है।

डाक्टर लूई कौहिनी की "नई चिकित्सा" पढ़िये। उसमें एक अध्याय है "हम क्या खाएँ क्या पियें"! उसमें उन्होंने सिद्ध किया है कि मांस-भक्षण से अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। फल खाना और ठण्डा पानी ही स्वास्थ्यकर है।

यहाँ हम कुछ और रायें देते हैं—

फ्रांस देशीय प्रसिद्ध डाक्टर लूकस शैम्पोनियर (Dr. Lucas Champoniere) लिखते हैं—

"Appendicites is practically unknown among vegetarians".

Scanned by CamScanner

अर्थात्—शाकाहारियों में अपेंडीसाइटीज की बीमारी नहीं होती।

डॉ० लेफनबिल (Dr. Lucas Champoniere) लिखते हैं—

"Cancers are caused by Diseased meat".

अर्थात्—कैंसर की बीमारी दोषयुक्त गोश्त खाने से हो जाती है।

कबीर०—शाकाहारी और मांसाहारी दोनों ही बीमार होते हैं।

चन्द्र०—नहीं ऐसी बात नहीं। डाक्टर रसेल (Dr. Russell) अपनी पुस्तक "Strength and diet of all Nations" में अनेक अन्वेषणों के उपरान्त लिखते हैं—

Ist—Nations using for food a large percent of flesh have a large percent of cancer.

2nd—In countries using little or no flesh there is a little cancer.

3rd—Increase of flesh-eating has been followed by increase of cancer.

अर्थात् (१) जातियाँ जिनमें अधिक मात्रा में मांस खाया जाता है, उनमें उतनी ही अधिक मात्रा में कैंसर की बीमारी होती है।

(२) जिन देशों में मांस कम मात्रा में या बिल्कुल नहीं खाया जाता, उनमें कैंसर की बीमारी थोड़ी होती है।

(३) मांस खाने की मात्रा में वृद्धि होते ही कैंसर में भी वृद्धि हो जाती है।

बोस्टन (अमरीका के प्रसिद्ध डॉक्टर शिरमेर (Dr. Schirmer) का कहना है—

"It is impossible for a vegetarian to have typhoid fever"

अर्थात्—शाकाहारी को टाइफाइड ज्वर होना असम्भव है।

डाक्टर पार्कस (Dr. Parkas) ने लिखा है—

"It has been stated by several of the best observers in the tropics that those who eat largely of animal food are less healthy than those who take more vegetable food".

अनेकों डाक्टरों का यह अनुभव है कि उष्ण कटिबन्ध में मांससेवियों से शाकाहारी अधिक स्वस्थ शाकाहारी पाये जाते हैं।

डाक्टर क्रेग का कहना है—

"I have known many vegetarians In the last forty years but not

Scanned by CamScanner

one of them used liquor."

पिछले चालीस वर्षों में मेरा परिचय बहुत से शाकाहारियों से हुआ है और उनमें से एक को भी मैंने शराब सेवन करते हुए नहीं पाया।

ठा० अभ्यु०—मैं कितने ही मांसाहारियों को जानता हूँ, वे तो बहुत स्वस्थ दिखाई देते हैं।

चन्द्र०—उन पर इसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा, चाहे देर में चाहे जल्दी। मेरी एस० ब्राउन (Mary S. Brown) अपनी पुस्तक Reasons for a vegetarian Diet में लिखते हैं—

"To be sure, many indulge in flesh foods, with apparent immunity, but the consequences of such irrational diet will make themselves noticeable sooner or later. The liver and kidneys will in time become unable to perform their functions and the waste matter will accumulate in the system, causing tuberculous and cancerous conditions, Gout, rheumatism and so forth."

''यह सम्भव है कि कुछ व्यक्ति बिना किसी प्रकार की क्षति के मांस सेवन करते रहें, पर यह निश्चय है कि इस प्रकार के अमानुषिक भोजन का परिणाम जल्दी या देर से अवश्य प्रकट होगा। लिवर और किडनी दूषित होकर अपना काम छोड़ देगी और उसके फलस्वरूप क्षय, गठिया आदि रोग हो जायेंगे।''

मु०—क्या मांस खाना छोड़ देने से स्वास्थ्य सुधर जाता है।

चन्द्र०—हाँ।

डाक्टर पर्कस अपने अनुभव से लिखते हैं—

"I reduced my consumption of flesh to a minimum with the result that the periodic headaches, pells of mental depression and slight attacks of muscular rheumatism from which I had suffered for some years, gradually ceased to trouble me."

मैंने मांस सेवन की मात्रा बहुत कम कर दी है। जिसका परिणाम यह हुआ कि सिर दर्द, मानसिक थकावट तथा गठिया रोग जिससे मैं अनेक वर्षों से पीड़ित था, दूर हो गये।

डाक्टर हैनरी परडो (Dr. Henry Purdo) लिखते हैं—

"I have known persons who after adoption the vegetarian practice of diet, recover their heal and no longer suffer from such com-

Scanned by CamScanner

plaints as indigestion, constipation, gout, fitsete. Moreover I believe that a strict vegetarian is less liable to ordinary disease than a beef eater."

मैं ऐसे व्यक्तियों को जानता हूँ जो शाकाहारी होने पर अधिक स्वस्थ हो गये और कब्ज, गठिया, फिट आदि रोगों से मुक्त हो गये। मेरा यह दृढ़ विश्वास है, मांसाहारी की अपेक्षा शाकाहारी कम रोग ग्रसित रहता है।

कबीर०—तो भाई स्वस्थ्य के लिए कौन-सा भोजन उचित होगा।

चन्द्र०—शाकाहार कीजिये। डाक्टर टी०एस० क्लाउस्टन एम०डी० (Dr. T.S. Clouston M.D.) बच्चों के भोजन के सम्बन्ध में लिखते हैं—

"Milk, bread, butter, vegetables and Scotch broth (mixed barley and other vegetables) are the very best of all foods for children and they should be given in abundance. Flesh eating children are often nervous and thin."

दूध, रोटी, मक्खन, तरकारी, दलिया बच्चों के लिए सब खानों में सर्वोत्तम है और अच्छी मात्रा में देना चाहिए। मांस खानेवाले बच्चे प्राय: शर्मीले और दुर्बल होते हैं।

ठा० अभ्यु०—क्या आप समझते हैं कि ऐसे भोजन से शरीर में ताकत आ जायेगी।

चन्द्र०—हाँ! क्यों नहीं! घास में बड़ी शक्ति होती है। पहली जुलाई १९४५ के लीडर (The Leader) समाचार-पत्र से उद्धरण देते हैं।

Speaking at the Food-Education Society's conference, 70 year old V.J. Branson who lives on grass advocated the value of grass as food and said that he had been asked by the War Office to instruct commanders how to eat grass 'I cycled to Scotland to do so. It took me eight days and I ate grass on my way', he said.

Writing of his experience of grass eating in 'the Health For All, London' (a nature cure magazine) he pointed out that on this low diet he maintained not only good health but amount of strength and abil-

Scanned by CamScanner

ity to do hard work such as carrying logs for building a house.

वी०जे० ब्रेसन० महोदय की अवस्था ७२ वर्ष है और वे केवल घास पर रहते हैं। उन्होंने खाद्य प्रचार सम्मेलन के सम्मुख अपना व्याख्यान देते हुए कहा—'युद्ध विभाग की ओर से मुझको आदेश मिला कि सैनिकों को घास खाना सिखाऊँ। मैं साईकिल पर स्काटलैण्ड में भी इसी काम के लिए आया। मार्ग में मुझे आठ दिन लगे और मैं बराबर घास ही खाता रहा।' अपना अनुभव दर्शाते हुए वे लन्दन के समाचार-पत्र में लिखते हैं कि इस आहार से न केवल उनका स्वास्थ्य ही ठीक बना रहा बल्कि उनमें इतनी शक्ति बनी रही कि भवन निर्माण के लिए भारी-भारी लट्ठे उठवाने का कठिन कार्य भी करते रहे।

इन्द्र०—यह उन दशों का हाल है, जहाँ अधिक संख्या में लोग मांस खाते हैं। हम लोगों को भी इसका अनुकरण करना चाहिए।

कबीर०—डाक्टरों की रायें सुन कर तो मैं दंग रह गया।

✿

पन्द्रहवीं वार्त्ता

मनुष्य का स्वाभाविक भोजन

मुकर्जी०—आज मैं एक प्रश्न करता हूँ।

राम०—कीजिये।

मुक०—यदि मनुष्य का स्वाभाविक भोजन मांस न होता तो संसार के इतने मनुष्य मांस न खाते।

इन्द्र०—क्या आप कह सकते हैं कि मनुष्य अधिकांश में अपना जीवन स्वाभाविक रीति से बिताता है? और पैतृक संस्कारों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता?

मुक०—नहीं। ऐसा तो नहीं।

कबीर बख्श—हम अगर ऐसा मानेंगे तो जंगली लोग ही हमारे गुरु बन जायेंगे।

चन्द्र०—मौलवी साहेब! आपने ठीक फरमाया, फिर तो मजहबी तालीम की जरूरत नहीं रहेगी।

कबीर०—यही तो मैं कहता हूँ।

इन्द्रदेव—मनुष्यों के शरीर की बनावट से प्रतीत होता है, मनुष्य

Scanned by CamScanner

मांस-भक्षी होने के लिए नहीं बनाया गया। कुछ लक्षण यह है—

(१) मनुष्य के दाँतों और कुत्ते के दाँतों की तुलना कीजिये। कुत्ते के दाँत नुकीले होते हैं, जो मांस में झट गड़ सकें। मनुष्य के दाँत सर्वथा भिन्न होते हैं। अन्य शाकाहारी जन्तुओं के दाँतों का निरीक्षण कीजिये। मनुष्य को यदि मांस चीड़ने-फाड़ने के दाँत दिये जाते तो वह छुरी का प्रयोग न करता। क्या आपने किसी मनुष्य को बकरे, मुर्गे या सुअर में दाँत गड़ाते देखा है?

(२) मांसाहारियों की भोजन नलिका (Alimentary Canal) छोटी होती है और शाकाहारियों की बहुत लम्बी। मनुष्य की भोजन नलिका उसके शरीर से बारह गुनी होती है। इसका कारण है कि फलों और शाक की अपेक्षा मांस में बहुत जल्द सड़न उत्पन्न हो जाती है। इतनी बड़ी नलिका में मांस देर तक नहीं रह सकता और सड़ने लगता है, इसलिए मांस-भक्षण अनेकों रोगों का कारण है।

(३) मनुष्यों के पञ्जों और उँगलियों को देखो। क्या ईश्वर ने इनको शिकार करने के लिए बनाया है? यही कारण है कि मनुष्य ने बिना हथियारों के आज तक किसी का शिकार नहीं किया। भेद केवल इतना है कि जो शस्त्र उसने अपनी रक्षा के लिए आविष्कृत किये थे, उन्हीं को उसने भोजन के लिए शिकार करने में प्रयुक्त कर लिया।

(४) मुँह का रस भी मांसाहारियों और शाकाहारियों में भिन्न-भिन्न होता है। मनुष्य में अलकैलाइन (Alkaline) और मांसाहारी जीवों में एसिडिक (Acidic)। मांसाहारी कुत्ते आदि जीभ से पानी पीते हैं और शाकाहारी पशु और मनुष्य भिन्न प्रकार से। प्रोफेसर बैरन क्यविियर (Prof. Boran Cuvier) लिखते हैं—

"Comparative anatomy teaches us that man resembles the fiugivorous animals in every thing, the Carnivorous in nothing."

अर्थात् शारीरिक रचना में मनुष्य फलाहारी पशुओं से अत्यन्त सादृश्य रखता है और मांसाहारी पशुओं से कुछ भी नहीं।

डाक्टर (Kellog) एक मजे की बात कहते हैं। उनका कथन है कि गिलहरी फलाहारी है, परन्तु जब फल नहीं मिलते तो छोटी चिड़ियाँ को भी खा जाती हैं। इससे वह अनुमान लगाते हैं कि शायद बहुत मांसाहारी जानवर पहले शाकाहारी थे, परन्तु शाक न मिलने के

Scanned by CamScanner

कारण मांसाहारी बन गये। मनुष्य भी उनमें से एक है।

ठा० अभ्यु०—बहुत से लोग कहते हैं कि मनुष्य पहले शाकाहारी ही रहा होगा, परन्तु अब तो लाखों पीढ़ियों से मांस खाते-खाते उसने अपना स्वभाव बदल लिया है, अतः मांस उसका स्वाभाविक भोजन बन गया।

चन्द्र०—यह ठीक है कि मनुष्य को मांस का चस्का लग गया है, परन्तु वह अपने शरीर की रचना में कोई परिवर्तन नहीं कर सका। डाक्टर कैलाग और क्यूवियर ने लाखों पीढ़ियों पहले के मनुष्यों पर परीक्षण नहीं किया। उनके परीक्षण तो आजकल के मनुष्यों पर ही हुए हैं। मनुष्य की शरीर रचना वैसी ही है और आज भी मांस का भोजन उसको उसी प्रकार हानि पहुँचाता है, जैसा पहले पहुँचाता था।

मुक०—मनुष्य आज भी जब किसी पर क्रोध करता है तो दाँत मिसमिसाता है, मानों खा जायेगा। इससे प्रतीत होता है कि पहले वह दाँतों से पशुओं को काटा करता था।

चन्द्र०—यह तो एक ही कही। वाह बाबूजी! दाँत तो मनुष्य दूसरे मनुष्यों पर मिसमिसाता है तो क्या पहले नराहारी था?

ला० त०—यह आशय नहीं है। विकासवाद का सिद्धान्त यह है कि मनुष्य पशुओं से उन्नति करके मनुष्य बना है। पहले वह मांसाहारी और शायद नराहारी भी रहा हो।

चन्द्र०—विकासवाद पर वाद चलाना एक दूसरे विषय में पड़ जाना होगा, अतः उसको यही विराम दीजिए, परन्तु यदि डार्विन का विकासवाद ठीक है तो दो शिक्षाएँ ली जा सकती हैं—प्रथम तो सब पशु-पक्षी हमारे भाई और सम्बन्धी हैं, अतः इनको खाना नहीं चाहिए। दूसरे बन्दर सबसे निकटतम जात है, जिसकी मनुष्य से समता है। ग्रामीण भाषा में कहा भी जाता है कि मनुष्य पहले बन्दर था। उन्नति करते-करते मनुष्य बन गया। इससे सिद्ध है कि बहुत कुछ उन्नति करके तो शाकाहारी बन्दर बना। अब उन्नति करके मनुष्य बना है, अतः यदि सैकड़ों योनियों के मांसाहारी संस्कार छोड़कर बन्दर बना तो फिर मनुष्य बनकर मांसाहारी बनना उन्नति नहीं अवनति है। यह भी एक युक्ति है कि मांस नहीं खाना चाहिए।

सेठ० लल्लू०—यह तो आपने अच्छी युक्ति दी।

इन्द्र०—जो लोग मनुष्य का स्वाभाविक भोजन मांस बताते हैं,

Scanned by CamScanner

वे मनुष्य के स्वभाव पर थोड़ा भी विचार नहीं करते।

कबीर०—कैसे।

इन्द्र०—सुनिये। मनुष्य का बच्चा मांस खाना सीखता है। स्वभाव से मांस से प्रेम नहीं रखता। बिल्ली का बच्चा चूहे को देखकर ही उसको मारने दौड़ता है, मनुष्य का बच्चा फलों की ओर स्वाभाविक प्रेम रखता है। वह उन पर टूटता है। मांस पर नहीं। मांस उसको उस समय तक प्रिय नहीं लगता जब तक उसको खिलाया न जाए। उसका एक प्रमाण है। जो मांसाहारी नहीं है, उनके बच्चों को मांस देखकर ही घृणा होती है। किसी-किसी को तो वमन भी हो जाता है। इससे सिद्ध है कि ईश्वर ने मनुष्य के हृदय में स्वाभाविक घृणा मांस की ओर से उत्पन्न कर दी है। मनुष्य मांस को वीभत्स समझता है। यदि आपके यहाँ कोई उत्सव हो और आप पण्डाल सजावें तो आप फल, फूल, नारंगी आदि लटका देते हैं। उनसे शोभा बढ़ जाती है। मांसाहारी लोग भी ऐसा ही करते हैं। वे बकरे की टाङ्ग या हिरण की आँतें नहीं लटकाते। सभ्य देशों में मांस की दुकानें अलग रखी जाती हैं और उनके वीभत्स दृश्यों को छिपाया जाता है। क्यों? इसलिए कि इतना क्रूर होनेपर भी मनुष्य ने अभी मांस की ओर से स्वाभाविक घृणा का परित्याग नहीं किया। आप किसी दिन अपने कमरे या पण्डाल को हड्डियों मांसपेशियों, रक्त आदि से सजा कर देख लीजिए फिर अपने स्वभाव का आप निर्णय कीजिये! वस्तुतः मांस खानेवाले इस स्वाभाविक वीभत्सता को पाकशाला सम्बन्धी चातुर्य से ढक देते हैं, जिससे मनुष्य की साधारण घृणा जागृत न होवे। मैं तो समझता हूँ कि यदि स्वयं मार कर खाना पड़े तो करोड़ों मनुष्य मांस छोड़ देवें, क्योंकि वीभत्स दृश्यों की कल्पना मात्र ही मांस से घृणा करने के लिए पर्याप्त है। मनुष्य की स्वाभाविक सभ्यता आदि कृत्रिम उपायों से तिरोभूत न की जाए तो मांस खाना मनुष्य के लिए कठिन हो जाए।

चन्द्र०—धन्य हो इन्द्रदेवजी! आपने इस विषय का निरूपण बड़ी सुन्दरता से किया है। आपने 'बर्नाडशा' का नाम सुना होगा। वह अंग्रेज जाति के एक बहुत प्रसिद्ध लेखक हैं। इस समय उनकी आयु सौ वर्ष से कुछ ही कम होगी। वह मांसाहारी नहीं हैं। चालीस वर्ष से अधिक समय हुआ कि उन्होंने मांस छोड़ दिया। डॉक्टरों ने कहा कि मांस न खाओगे तो मर जाओगे। उन्होंने उत्तर दिया कि—

Scanned by CamScanner

"मुझे परीक्षण कर लेने दो। यदि मैं न मरा तो तुम निरामिष भोजी हो जाओगे।"

बर्नार्डशा आज तक जीवित हैं और दूसरों की अपेक्षा स्वस्थ हैं। आप जानते हैं कि उन्होंने क्या लिखा था—

"मेरी परिस्थिति तो बड़ी गम्भीर है। मुझसे कहा जाता है कि गोमांस खाओ तभी जीवित रहोगे। मैंने अपनी वसीयत लिख दी है। यदि मैं मर गया तो मेरी अर्थी के साथ विलाप करती हुई गुड़ियों की आवश्यकता नहीं। मेरे साथ बैल, भेड़ें, मुर्गे और मछलियाँ होंगी, क्योंकि मैंने साथी प्राणियों को खाने के बदले मरना अच्छा समझा। हजरत नूह की किश्ती को छोड़कर यह दृश्य सबसे अधिक उत्तम और महत्त्वपूर्ण होगा।"[१]

सेठ०—वाह! वाह! वाह रे बर्नार्डशा! तुम धन्य हो जो प्राणियों पर इतनी दया करते हो।

ला०—यदि मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन न होता तो मांस को मनुष्य इतनी रुचि से क्यों खाता?

चन्द्र०—लालाजी! यह युक्ति तो ठीक नहीं। मनुष्य का स्वाभाविक भोजन तम्बाकू नहीं, परन्तु जिसको हुक्का या सिगरेट पीने की लत लग जाती हैं, उसको एक मिनिट भी उसके बिना चैन नहीं पड़ता। अफीम मनुष्य का स्वाभाविक भोजन नहीं, परन्तु अफीमचियों को देखा होगा कि अफीम के बिना उनकी क्या दशा होती है। मनुष्य एक ऐसा जन्तु है, जिसे प्रकृति का विरोध करने में आनन्द आता है। वह नित्य सोचा करता है कि प्रकृति के विरुद्ध कैसे चला जाए, परन्तु प्रकृति भी इसको इसके कर्मों का दण्ड दिये बिना नहीं छोड़ती, फिर भी मनुष्य मानता नहीं। इसको अनुकरण करना बहुत आता है। कुत्ते का अनुकरण, बिल्ली का अनुकरण, शेर चीते का अनुकरण, यदि मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन होता तो सभी को अच्छा लगता। दूसरी बात यह भी है कि बहुत से मनुष्यों को आदमी का मांस स्वादिष्ट लगता है, उन पर यह युक्ति कैसे घटेगी।

राम०—ऐसा कौन अघोरी होगा जो मनुष्य का मांस खा जाए।

१. बर्नार्डश का अब देहावसान हो चुका है। वह निरन्तर शाकाहारी रहे। जिस समय इस पुस्तक का पहला संस्करण निकला था वह जीवित थे।

(लेखक)

चन्द्र०—है क्यों नहीं। बहुत-सी जंगली जातियाँ मनुष्य को मार कर खाती हैं। सभ्य देशों में भी नर-भक्षी पिशाचों के उदाहरण मिलते हैं। आप एक पुस्तक पढ़िये "द बुक ऑफ डेज" (The Book of Days) ब्रतानिया के पुराने निवासी नराहारी थे। आज उन्होंने इतनी उन्नति की है कि मांसाहार भी छोड़ते हैं, जैसे बर्नार्डशा। खेद है कि सभ्य भारतीय अवनति की ओर जा रहे हैं। १८१४ ई० में लिंडसे (Lindsay) ने स्काटलैण्ड का इतिहास लिखा था। उसमें दिया हुआ है कि स्काटलैण्ड के पूर्वी तट पर एक मनुष्य उसकी स्त्री और परिवार को इस अपराध में जला दिया गया कि वह बच्चों को चरा-चरा कर खा जाते थे। उस घराने की एक लड़की को जब मारने ले चले तो उसने उत्तर दिया, मुझे क्यों ताड़ना देते हो? मैंने क्या अपराध किया, मैं विश्वास दिलाती हूँ कि यदि आप लोग एक बार स्त्री और पुरुषों का मांस चख लें तो ऐसा स्वाद लग जाए कि कभी आप उसको न छोड़ सकें।

यह हुई आदत की बात! परन्तु आदत तो मनुष्य को सोच समझ कर बनानी चाहिए। संसार की जेलों में कैदी मिलेंगे। वह प्राय: अपनी आदतों के कारण वहाँ गये हैं। दुर्व्यसनों से बुरा संसार में कोई नहीं है, अत: मनुष्य को इस ओर सावधानी रखनी चाहिए। बुरी आदतों को छोड़ो और अच्छी आदतें बनाओ। इसी में तुम्हारा और जगत् का कल्याण है।

मुकर्जी०—यह है कठिन बात!

चन्द्र०—मनुष्य जीवन भी कठिन ही है। कुत्ते, बिल्ली से कोई शम, दम, जप, तप, त्याग, ज्ञान, परोपकार की आशा नहीं करता, परन्तु हम मनुष्यों को तो ईश्वर ने ज्ञान दिया है। हमारा उत्तरदायित्व भी बहुत है।

सेठ०—यदि ईश्वर ज्ञान न देता तो उत्तरदायित्व भी न होता।

चन्द्र०—न होता। पागलों को कौन उत्तरदायी ठहराता है?

सेठ लल्लू०—तो वही अवस्था अच्छी होती।

चन्द्र०—यह कैसे? बुद्धि ही से अपार आनन्द मिलता है। ज्ञान से अधिक आनन्द किसी वस्तु से नहीं मिलता। सुअर को मल भक्षण से जो आनन्द आता है, वह वही आनन्द नहीं है, जो मनुष्य को ब्रह्म ज्ञान से मिलता है। फारसी कवि सादी साहेब कहते हैं—

Scanned by CamScanner

कि बे इल्म न त्वां खुदरा शनाख्त।

बिना ज्ञान से कोई ईश्वर को नहीं पहचान सकता। यदि ज्ञान में आनन्द न हो तो ऋषि मुनि आश्चर्य क्यों करें? भोग में क्षणिक आनन्द फिर दु:ख ही दु:ख है। यदि समस्त संसार नराहारी हो जाए तो आप कह सकते हैं कि क्या दशा हो।

कबीर०—तोबा! तोबा! कुछ न पूछिये। खुदा बचावे ऐसे मरदूदों से।

इन्द्र०—अब दिन बहुत चढ़ गया। चलें, नमस्ते, नमस्ते।

✿

सोलहवीं वार्त्ता

मांस और क्षत्रिय जाति

अभ्यु०—कल रात बड़े मजे की बात हुई।

इन्द्र०—क्या?

अभ्य०—आप जानते हैं कि मैंने मांस खाना छोड़ दिया है।

ला० तस०—हाँ! आप उस दिन कह तो रहे थे।

अभ्यु०—कल एक भोज था। कई बड़े-बड़े रईस इकट्ठे थे। मांस और शराब सभी तो था। मैंने खाने से इनकार कर दिया। इस पर बड़ी हँसी हुई। सब कहने लगे कि अभ्युदय सिंह तो बाणियाँ (बनिया) हो गया। यह कैसा क्षत्रिय है। इसने क्षत्रियों का नाम डुबो दिया। जैनियों के समान हिंसा हिंसा करता है।

ला० तस०—फिर आपने क्या किया?

अभ्यु०—मैंने खाया तो नहीं, परन्तु मुझे झेंपना पड़ा। वे सब मुझे बनाते रहे।

चन्द्र०—आपने उनको क्यों नहीं बनाया?

अभ्यु०—मैं क्या बनाता! वे कई थे। मैं अकेला!

चन्द्र०—आप अवश्य कच्चे क्षत्रिय हैं।

अभ्यु०—आप भी ऐसा कहते हैं?

चन्द्र०—क्यों न कहूँ? एक क्षत्रिय कई क्षत्रियों को देखकर डर गया झेंप गया! जब उनके व्यंगों से डर गया तो तलवारों से क्या हाल होता?

अभ्यु०—भाई कुछ कहो। बात तो यह है कि मुझसे उत्तर नहीं

Scanned by CamScanner

बन आया।

चन्द्र०—देखिये ठाकुर साहेब! पहले तो देखना चाहिए कि क्षत्रिय कहते किसको हैं। '**क्षतात् त्रायते स क्षत्रियः।**' जो प्राणियों की दुःख से रक्षा करे वह क्षत्रिय है। क्षत्रिय को 'नृप' भी कहते हैं, क्योंकि वह मनुष्यों की रक्षा करता है। क्षत्रियत्व और मांस-भक्षण से कोई सम्बन्ध नहीं है। जो लोग जीवन भर मांस और शराब का प्रयोग करते, सैकड़ों प्राणियों की हिंसा करते और किसी की रक्षा नहीं करते वह क्षत्रिय कैसे? वह तो महा अक्षत्रिय हैं।

अभ्यु०—क्षत्रिय शेर होता है।

चन्द्र०—क्षत्रिय की उपमा शेर से देनी बड़ी भ्रममूलक है। पुराने काल के भारतवर्ष के क्षत्रियों के नाम हिंसा पर नहीं होते थे। राजा दशरथ दशरथसिंह न थे। राजा युधिष्ठिर युधिष्ठिरसिंह न थे। राजा दिलीप का नाम दिलीपसिंह न था। राजा अज अजसिंह न थे। जिस दिन से क्षत्रियों ने अपने नाम के साथ 'सिंह' लगाना आरम्भ किया। वे कोरे सिंह बन गये।

अभ्यु०—इससे हानि क्या हुई?

चन्द्र०—हानि तो बहुत हुई। आदर्श गिर गया। उद्देश्य से च्युत हो गये।

अभ्यु०—कैसे?

चन्द्र०—देखिये। सिंह को वन का राजा क्यों कहते हैं?

अभ्यु०—बल के कारण।

चन्द्र०—कैसा बल? पाशविक बल या नैतिक बल या आत्मबल।

अभ्यु०—बल तो बल ही है।

चन्द्र०—नहीं। पाशविक बल किसी मनुष्य को राजा नहीं बना सकता। राजा के लिए, प्रजा का पालन करना आवश्यक है। सिंह सबको खा जाता है, किसी की रक्षा नहीं करता। सिंह के राज में किसी को शक्ति या स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं होती। सिंह किसी को '**अदीनाः स्याम शरदः शतम्**' का पाठ पढ़ने नहीं देता। मारना और खाना शेर का काम है। जब से क्षत्रिय शेर बन गये, उन्होंने प्रजापालन छोड़ दिया। वे खाऊ-वीर बन गये। नीति और धर्म से इनका सम्पर्क छूट गया। धर्मशास्त्र को यह भूल गये। इनमें पाशविक बल रह गया है। आत्मबल चला गया। यह इन्द्रियों के दास हो गये। अभिमान में

Scanned by CamScanner

चूर रहने लगे, द्वेषभाव बढ़ गया।

अभ्यु०—तो क्या आप राणा प्रताप जैसे क्षत्रियों की अवहेलना करते हैं?

चन्द्र०—नहीं। महाशय! क्या सभी क्षत्रिय कहलानेवाले राणा प्रताप नहीं हैं? राणा प्रताप का नाम इसलिए प्रसिद्ध है कि उन्होंने सर्वस्व त्याग करके हिन्दू जाति के उत्थान का प्रयत्न किया, परन्तु ऐसे क्षत्रिय कितने हुए? आप तनिक क्षत्रियों के आन्तरिक जीवन की ओर देखें। एक अंग्रेज फार्सीदां नीतिज्ञ ने रईसों के विषय में कहा है—

चार चीजस्त वर-रईसां फर्ज।
पालकी गुड़गुड़ी तवाईफ कर्ज॥

अर्थात् रईसों के चार लक्षण हैं (१) पालकी (२) हुक्का (३) रण्डीबाजी (४) कर्ज। ठाकुर साहेब, क्षत्रिय की शान इस बात में नहीं है कि उसने अपने जीवन में कितने अण्डे खाए, कितने बकरे मारे, कितने खरगोशों का शिकार किया। कितने बटेरों के पँखें नीचे अथवा कितने भेड़े हलाल किये। प्रश्न तो यह होना चाहिए कि उन्होंने अपने जीवन में कितने प्राणियों को विपत्ति से बचाया। राजा दिलीप ने क्या कहा था? याद कीजिए कालिदास के शब्दों को—

यशः शरीरे भवमे दयालुः

अर्थात् मुझे अपने शरीर की परवाह नहीं। यश की परवाह है। देखो मेरे यश में बट्टा न लगने पावे। वह स्थल याद है, जहाँ पर दिलीप ने यह वचन कहे हैं—

इन्द्र०—हाँ! याद है। गाय की जान बचाने के लिए उसने अपने को विपत्ति में डाल दिया था।

चन्द्र०—बस! यही तो मैं कहता हूँ।

अभ्यु०—आपने कहा तो ठीक, परन्तु यदि क्षत्रिय लोग मांस न खाएँ तो शिाकर की आदत छूट जाए और शिकार न करें तो रक्षा कैसे हो?

चन्द्र०—ठाकुर साहेब! क्षमा कीजिए। हैं तो आप भी कलयुगी क्षत्रिय न। इसलिए आपके विचार भी कलियुगी हैं। मैं एक बात पूछता हूँ।

अभ्यु०—क्या?

चन्द्र०—क्या उस समय तक कोई मनुष्य किसी की रक्षा करने के लिए तत्पर हो सकता है, जब तक दया का भाव न हो।

Scanned by CamScanner

अभ्यु०—नहीं। पालन के लिए दया चाहिए।

चन्द्र०—दया का अभ्यास भी चाहिए।

अभ्यु०—हाँ।

चन्द्र०—वह अभ्यास बचपन से ही पड़ना चाहिए।

अभ्यु०—हाँ।

चन्द्र०—तो क्या वह क्षत्रिय लड़के, जिनको बचपन से ही गुलेल से चिड़िया मारने की आदत डाली जाती है दया का अभ्यास करते हैं या निर्दयता का।

अभ्यु०—निर्दयता का।

चन्द्र०—फिर इस निर्दयता के अभ्यास का फल दया कैसे होगी? वह तो निर्दयी ही बनेंगे। दया का जो अङ्कुर उनके हृदय में होता है, वह भी मुरझा जाता है।

ठा० अभ्यु०—प्रतीत तो ऐसा ही होता है।

चन्द्र०—इसीलिए तो आजकल के क्षत्रियों को अपने ऐश आराम की सूझती है। प्रजा पालन की नहीं। रातों नाच-रंग, शराब और रंडीबाजी। दिन में सोना या शिकार। प्रजा का हित कौन करे? राज कर्मचारी राजा को देख वैसे हो जाते हैं। राजाओं की खुशामद और अपनी स्वार्थ सिद्धि। शान बहुत, काम कुछ नहीं। फिर शेर भी कैसे? सरकस के शेर जिसके सिर पर बिजुली का कोड़ा चमकता रहे। आप इनको शेर कहिये या शेर का बाप। इनमें जब तक आत्म-बल नहीं आता, उस समय तक यह क्षत्रिय नहीं कहलाये जा सकते। हाँ

यथा काष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः

काठ के हाथी के समान हाथी अवश्य हैं। क्षत्रियों की सन्तान हैं, परन्तु क्षत्रिय नहीं।

ठा० अभ्यु०—क्या शिकार खेलना क्षत्रिय का काम नहीं?

चन्द्र०—राजा मनु तो क्षत्रिय थे?

ठा० अभ्यु०—हाँ?

इन्द्र०—आपसे अच्छे क्षत्रिय थे?

ठा० अभ्यु०—हाँ थे।

चन्द्र०—उन्होंने तो शिकार या मृगया को क्षत्रियों का गुण नहीं, अपितु दोष बताया है। देखिये—

Scanned by CamScanner

इन्द्रियाणां जपे योगं समातिष्ठेद् दिवानिशम्।
जितेन्द्रियो हि शक्नोति वशे स्थापयितुं प्रजाः॥
दश काम समुत्थानि तथाष्टो क्रोधजानि च।
व्यसनानि दुरन्तानि प्रयत्नेन विवर्जयेत्॥
मृगयाक्षो दिवास्वप्नः परीवादः स्त्रियो मदः।
तीर्यत्रिकं वृथाद्या च कामजो दशको गणः॥

(मनु०अ० ७।४४,४५,४६,४७)

ठा०—इनके अर्थ समझाइये।

चन्द्र०—राजा को चाहिये कि रात दिन इन्द्रियों के रोकने में यत्न किया करें। जो जितेन्द्रिय हैं, वही प्रजा को वश में कर सकता है।

यह हुआ पहले श्लोक का अर्थ? क्या आप शराबी और रंडीबाज को इस कोटि में रख सकेंगे? क्या वे क्षत्रिय हैं, जो बीसियों विवाह करते और उसके उपरान्त अन्य प्रकार व्यसनों में फँसे रहते हैं?

अभ्यु०—नहीं।

चन्द्र०—दूसरे और तीसरे श्लोकों का अर्थ सुनिये—

राजा को चाहिए कि काम से उत्पन्न हुए दस अत्यन्त निषिद्धि व्यसनों को छोड़ दे।

अभ्यु०—काम से उत्पन्न हुए दस व्यसन कौन से हैं?

चन्द्र०—तीसरे श्लोकं में इन्हीं को गिनाया है—

(१) मृगया—शिकार।
(२) अक्ष—जुआ।
(३) दिवास्वप्नः—दिन में सोना।
(४) परिवाद—दूसरों की बुराई।
(५) स्त्रियः—स्त्रैण होना।
(६) नशा।
(७) गाना।
(८) बजाना।
(९) नाचना।
(१०) व्यर्थ घूमना।

(६)–(१०): तौर्यत्रिक

राम०—यह तो सभी आजकल के क्षत्रियों में पाये जाते हैं।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—मनुजी तो लोगों के स्वभाव को जानते थे। उन्हें मालूम था कि क्षत्रिय राजाओं के पास पैसों की कमी नहीं। नौकरों की कमी नहीं। उनको शिक्षा देने का साहस कौन करे। पुरोहित और पण्डित उनके दक्षिणा के पात्र। वह बिचारे क्या मुँह खोलें? इसलिए राजा लोगों में यह अवगुण होना स्वाभाविक है। यही कारण है कि मनुजी ने राजाओं को विशेष करके इन अवगुणों से रोका।

अभ्यु०—तो क्या क्षत्रिय लोग हिंसक जीवों को न मारें?

चन्द्र०—अवश्य मारें! हिंसक जीवों को ही नहीं, अपितु मनुष्यों को भी, परन्तु निरपराधी पशुओं पर भी क्यों हाथ साफ करें और यह भी जबान के मजे के लिए?

अभ्यु०—बिना मारे अभ्यास कैसे होगा?

चन्द्र०—तो क्या चोर डाकुओं के मारने की योग्यता प्राप्त करने के लिए छोटे निरपराध बच्चों से अभ्यास का आरम्भ करना चाहिए? यह तो विचित्र बात रही। अभ्यास करना है, दुष्टों को मारने का हिंसक जीवों को नष्ट करने का और आरम्भ करते हैं निरपराध प्राणियों को मार कर खाने से। क्या कोई रंडीबाजी का अभ्यास करके इन्द्रिय दमन सीख सकता है?

कबीर०—कभी नहीं।

चन्द्र०—फिर बकरों को मारकर शेरों का शिकार नहीं आ सकता। आप लोग फारसी में डरपोक को बुजदिल कहते हैं।

राम०—'बुजदिल, क्या?'

कबीर०—'बुज' कहते हैं, बकरे को। बुजदिल कहते हैं जो बकरे का सा कमजोर दिल रखता हो?

चन्द्र०—फिर बकरे जैसे कमजोरों पर हाथ साफ करके शेर को मारना कैसे हो सकता है?

ला० त०—शेर बकरा खाता है। यह समझते हैं कि जो बकरा खायेगा वही शेर हो जायेगा।

चन्द्र०—मुझे एक बात याद आ गई। इङ्गलेण्ड के कुछ भागों के लोग आवाज को तेज करने के लिए झींगुर (Crickets) का शोरबा पिया करते थे, वे समझते थे कि जैसे झींगुर की आवाज तेज होती है, ऐसी ही उनकी हो जायेगी।

अभ्यु०—क्या ऐसा होता था?

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—नहीं जी! वह इनका भ्रम था। लाखों आदमी बकरा खाते हैं और उनमें शेर का एक गुण भी नहीं आता। सैकड़ों रोग लग जाते हैं? और निर्दयता तथा व्यसनों की आदत अलग से पड़ जाती हैं।

अभ्यु०—गोश्त खोर लोग बहादुर होते हैं?

चन्द्र०—आवश्यक नहीं। ऐसा ही होता तो ग्रीनलेण्ड के लोग सबसे बहादुर होते। बहादुरी के लिए आत्म-बल चाहिए। देखिये गाँधीजी में आत्म-बल है वह मांस नहीं खाते।

इन्द्र०—गाँधीजी को तो ठाकुर साहेब 'बाणियाँ' कहेंगे।

चन्द्र०—वे जो चाहें कहे। कहने में क्या लगता है। बाणियाँ शब्द फौन बुरा है? आजकल के तो सब राजे बाणियें होते जाते हैं। पहले तो प्रसिद्ध था कि "वाणिज्ये वसति लक्ष्मी"। आजकल प्रसिद्ध है कि "वाणिज्ये वसति राज्यम्"। अंग्रेज बनिये, अमेरिकन बनिये, रूसी बनिये और जापानी बनिये। यह राज्य नहीं चाहते, क्योंकि प्रजा का पालन करना पड़ेगा। यह बाजार चाहते हैं, जहाँ अपना माल बेच सकें और वहाँ के लोगों को निर्धन बना सकें। इन्हीं बनियों की देखा देखी हमारे देशी राजाओं ने भी व्यापार करना आरम्भ कर दिया है, जिससे धन प्रजा में न जाकर उनके कोषों में आया करे। हाथो निगल जाएँ दुम से परहेज। काम तो करें बनियों के से और बनिये शब्द से चिढ़ें, फिर दूसरी बात यह है कि दया करना बनियापन नहीं, यह तो क्षत्रिय का गुण है। बनिया अर्थ सिद्धि के लिए दूसरों को सता सकता है। क्षत्रिय कदापि ऐसा न करेगा। क्षत्रिय अपने कोष को भरने के लिए अनुचित कर न लेगा और अनुचित लाभ उठानेवाले बनिये को दण्ड देगा, इसलिए जो लोग निरामिष भोजियों को बनिया कहते हैं, वह बुद्धिमत्ता का प्रकाश नहीं करते। मुझे तो यदि कोई बनिया कहे तो मैं कहूँगा कि भेड़ियों से बनिये अच्छे। आप जानते हैं, बर्नार्डश क्या कहता है।

ला०तस०—वही बर्नार्डशा।

चन्द्र०—हाँ! वही।

अभ्यु०—क्या कहता है?

चन्द्र०—जब उसकी कोई दावत करता है तो कह देता है कि जहाँ लोग दरिन्दों के समान प्राणियों के मांस और हड्डियों को चबाते हैं, उनके साथ में भोजन नहीं कर सकता।

Scanned by CamScanner

अभ्यु०—तो क्या मांसाहारियों के साथ भोजन नहीं करना चाहिए।

चन्द्र०—मैं यह नहीं कहता! यह तो परिस्थिति के ऊपर निर्भर है, परन्तु मांसाहारियों के दुर्गुणों से अवश्य बचना चाहिए।

रामशरण—स्वामी दयानन्द क्षत्रियों को मांस-भक्षण की आज्ञा देते हैं।

इन्द्र०—कहाँ?

रामशरण—देखिये—

प्रश्न—जो सभी अहिंसक हो जाएँ तो व्याघ्रादि पशु इतने बढ़ जाएँ कि सब गाय आदि पशुओं को मार खाएँ। तुम्हारा पुरुषार्थ ही व्यर्थ हो जाएँ।

उत्तर—यह राजपुरुषों का काम है कि जो हानिकारक पशु वा मनुष्य हों, उनको दण्ड देवें और प्राण से विमुक्त कर दें।

प्रश्न—फिर क्या उनका मांस फैंक दें।

उत्तर—चाहे फैंक दें चाहे कुत्ते आदि मांसाहारियों को खिला दें वा जला दें अथवा कोई मांसाहारी खाए तो भी संसार की कुछ हानि नहीं होती, किन्तु उस मनुष्य का स्वभाव मांसाहारी होकर हिंसक हो सकता है। जितना हिंसा चोरी, विश्वासघात, छल-कपट आदि से पदार्थों को प्राप्त होकर भोग करना है, वह अभक्ष्य और अहिंसा धर्मादि कर्मों से प्राप्त होकर भोजनादि करना भक्ष्य है।

(सत्यार्थप्रकाश समु० १०, पृष्ठ ३५७)

चन्द्र०—इसमें तो क्षत्रियों को मांस खाने की आज्ञा नहीं दी, अपितु निषेध किया है। केवल क्षत्रियों को यह आज्ञा दी है—

(१) कि वे हिंसक पशुओं और मनुष्यों को दण्ड दें या मार डालें।

(२) उनकी लाश जला दें या फेंक दें या मांसाहारी कुत्तों को खिला दें।

(३) या कोई मांसाहारी मनुष्य खाए तो वह स्वयं हिंसक स्वभाव का हो जायेगा।

अब देखना चाहिए कि किन जानवरों को मारना लिखा है? हिंसक जैसे शेर, भेड़िये आदि! इनको कौन खायेगा? क्या आजकल के क्षत्रिय? नहीं। यह तो निरपराध पशुओं को मारते और खाते हैं।

Scanned by CamScanner

जरा सोचिये तो सही कि संसार के मुख्य-मुख्य नगरों में अनेक बूचड़खाने हैं। इनमें कौन मारा जाता है? भेड़िया? नहीं। शेर? नहीं। सर्प? नहीं। जितने हिंसक जीव हैं, वह तो एक भी नहीं, फिर कौन से? बकरे, भेड़, गाय, बैल, भैंसे। क्या वह हिंसक हैं? नहीं।

रहे हिंसक मनुष्य जैसा घातक, नृशंस, हत्यारे। इनके मांस को आप किसको खिलाना चाहते हैं? वस्तुतः इस स्थल पर स्वामीजी का सङ्केत हिंसक जीवों की ओर है। वही प्रश्न भी था। उनको न कोई क्षत्रिय खाता है न शूद्र? फिर क्या आपने आगे चलकर वहीं नहीं पढ़ा कि अहिंसा से प्राप्त हुआ भक्ष्य है और हिंसा से प्राप्त हुआ अभक्ष्य? वस्तुतः स्वामीजी ने मांस का इतने प्रबल शब्दों में निषेध किया है कि उनके विचारों के आधार पर क्षत्रियों को मांस खाने का कोई भी अवसर नहीं है! मैं समझता हूँ जब तक मांस-भक्षण का प्रचार रहेगा सच्चे क्षत्रियत्व की जड़ जमना कठिन है। यह मांस-भक्षण की प्रवृत्ति ही है, जिसके कारण सभ्य कहलानेवाली जातियाँ स्वार्थ अधर्म युक्त युद्धों में लाखों मनुष्यों का संहार कर देती हैं। संसार की शान्ति भङ्ग इसीलिए हो रही है। ऊपरी मन से तो शान्ति-शान्ति पुकारते हैं, परन्तु काम करते हैं, अशान्ति का। अभी मई १९४५ के भीषण महायुद्ध में जब मित्र-राज्यों की विजय हुई और विजय पर हर्ष मनाया गया तो बर्नार्डशा ने कहा, "मैं किस बात पर हर्ष मनाऊँ? अभी मनुष्य ने मनुष्य के संहार से तो हाथ खींचा नहीं, वस्तुतः हमने दूसरे की जान ले लेना अपना स्वभाव बना रखा है, अतः हमको दूसरे जीवों पर तो क्या मनुष्यों पर भी दया नहीं आती और आए भी कैसे? वायुमण्डल हिंसा के भाव से परिपूरित है। आप विवाह आदि उत्सवों पर देखिये। आप कैसे हर्ष मनाते हैं? सैकड़ों पशुओं को मार कर उनका मांस पका कर। आपके बड़े दिन खुशी के त्योहार पर कितने पशुओं को जान से हाथ धोना पड़ता है। आपके घर लड़का पैदा हो तो बकरा मारा जाए, मुण्डन हो तो बकरा मारा जाए। लड़के-लड़की का विवाह हो तो बकरों की जान पर आ बने।"

किसी की जान गई आपका मजा ठहरा।

अभ्यु०—यह ठीक है। मेरे ऊपर आपकी उक्तियों का प्रभाव है, तभी तो मैंने मांस-भक्षण त्याग दिया, परन्तु समझता हूँ कि बिना हिंसा के युद्ध नहीं होता और बिना युद्ध के काम नहीं चलता। सुर-असुर

Scanned by CamScanner

संग्राम चलते ही रहते हैं। वेदों और ब्राह्मणों में उनका उल्लेख है। दुष्टों को हनन करने के लिए वेदों में स्पष्ट आज्ञा है।

चन्द्र०—मैं आपसे सर्वथा सहमत हूँ। मैं नहीं कहता कि दुष्टों को दण्ड न दिया जाए या आततायियों के दमन के लिए युद्ध न किये जाएँ, परन्तु इससे और मांस-भक्षण से क्या सम्बन्ध? मैं पहले कई बार कह चुका हूँ कि आततायियों के मांस को कोई नहीं खाता। किसी को प्राणदण्ड देना और बात हैं और उसका मांस खाना और बात! एक अपराधी को मारना क्षत्रिय का धर्म है, परन्तु उसका या उसके मारने की योग्यता उत्पन्न करने के लिए किसी अन्य निरपराधी का मांस खाना महा पाप है। यदि मांस खाने की परिपाटी उठा दी जाए तो शीघ्र ही बहुत हिंसा दूर हो जाए, क्योंकि मनुष्य प्रायः असुर-दमन के लिए हिंसा नहीं करते, अपितु जीभ के गुलाम होने के कारण! मैंने अभी तो कहा था कि संसार के बूचड़खानों में करोड़ों पशु प्रतिदिन मारे जाते हैं। वे न तो अपराधी होते हैं न मूजी। न असुर, न आततायी? इनमें से अधिकतर तो वही होते हैं, जिनको मनुष्य अपने हाथ से दाना घास खिला कर मोटा करता है। वे बिचारे समझते हैं कि यह हमारा मित्र है। वे उसका हाथ चाटते और उसके पीछे चलते हैं, उसके बच्चों के साथ खेलते हैं। वह क्या जानते हैं कि यह क्रूर और निर्दयी मनुष्य मित्र की खाल ओढ़े हुए शत्रु है। यह हमको इस लिए घास और दाना दे रहा है कि एक दिन वह हमारे मांस को खा जाए? बूचड़ लोग मारने के एक दिन पूर्व बकरों को चने खिलाते हैं और पुचकार-पुचकार कर बूचड़खाने तक ले जाते हैं। इस समस्त व्यवहार में क्षत्रियत्व कहाँ से घुस गया? कायरता, कृतघ्नता, धोखा, निर्दयता और बर्बरता का नाम क्षत्रियत्व नहीं है। क्षत्रियों को तो विशेष कर मांस-भक्षण छोड़ देना चाहिए, जिससे न्यायपूर्वक दण्ड देने में उनको क्रोध न आवे और वे शान्ति से जाँच सकें कि अमुक प्राणी दण्ड का अधिकारी है या नहीं। मैं यहाँ एक उदाहरण दूँगा जो मेरे आशय को अधिक स्पष्ट करेगा।

अभ्यु०—दीजिये। मैं सुन रहा हूँ। आपकी बातों में मजा आ रहा है।

चन्द्र० -जजों को आपने फाँसी का हुक्म देते हुए सुना होगा।

अभ्यु० हाँ! कई बार।

चन्द्र० वह न्याय की तुला पर तोल कर फाँसी का हुक्म देते हैं।

Scanned by CamScanner

अभ्यु०—ठीक! मेरे एक भाई सेशन जज हैं। वह कहते हैं कि जब किसी को फाँसी की सजा देता हूँ तो बड़ा डर लगता है कि कहीं निरपराधी फाँसी न पा जाए? ईश्वर से डरना चाहिए। हम जान ले सकते हैं। दे नहीं सकते। फाँसी के तख्ते पर लटका सकते हैं, किसी मरे हुए को जिला नहीं सकते।

चन्द्र०—ठीक! यही क्षत्रियत्व है। आपके भाई सच्चे क्षत्रिय प्रतीत होते हैं। प्रत्येक क्षत्रिय में यह भावना होनी चाहिए।

अभ्यु०—ठीक!

चन्द्र०—मैं एक बात कहना चाहता था। यदि उस जज के विषय में यह सिद्ध हो जाए कि उसने क्रोध में आकर प्राणदण्ड की आज्ञा दी है तो क्या होगा?

अभ्यु०—वह जज दण्डनीय हैं। सच्चा जज वही है, जो ठण्डे दिल और ठण्डे दिमाग से अपराध की छानबीन करता है। क्रोध, द्वेष या ईर्ष्या को आने नहीं देता।

चन्द्र०—तभी तो मनु ने अक्रोध को धर्म का एक अङ्ग माना है। यदि जज लोग क्रोध के वशीभूत होकर दण्ड देने लगेंगे तो उनका मस्तिष्क विकृत हो जायेगा और न्याय की पूरी छानबीन न कर सकेंगे।

अभ्यु०—यह तो मैं भी मानता हूँ, इसीलिए फाँसी के मुकदमों का फैसला करने के लिए निष्पक्ष जज नियत किये जाते हैं।

चन्द्र०—यदि जजों को यह स्वतन्त्रता हो कि वह फाँसी के अपराधियों की लाशों को फाँसी लगने के पश्चात् खा जाया करें तो जानते हो क्या होगा?

कबीर०—तोबा! तोबा! क्या कह दिया।

चन्द्र०—मौलवी साहेब! आपके घृणासूचक शब्द सर्वदा उचित हैं, परन्तु जरा सोचिये, जो घृणा आप मनुष्य के मांस के साथ प्रकट करते हैं, गाय और बकरे के साथ क्यों नहीं प्रकट करते? मैंने तो ऐसे घातकों के मांस का जिक्र किया जो निर्दयतावश बीसियों के प्राण ले चुके हैं। बकरे और गाय तो फिर भी निरपराधी हैं।

ला० तस०—ठीक है। चलिये आप क्या कह रहे थे?

चन्द्र०—मेरा कहना यह है कि यदि कहीं जजों को यह आज्ञा हो जाए कि वह फाँसी पाये हुओं की लाश को खा जाया करें तो जज लोग फाँसी की सजा भी बार-बार दिया करें। स्वार्थी बहाना बना

Scanned by CamScanner

लेता है।

मुक०—हाँ। यह तो अवश्य हो! मुझे एक कहानी याद आई।

सेठ लल्लू०—कहिये।

मुक०—कहते हैं कि पका मांस खाने की प्रथा चीन से चली। पहले मांस का पकाना पाप समझा जाता था। चीनी लोग कच्चा मांस खाया करते थे। एक दिन किसी के घर में आग लग गई और एक सुअर जल गया। किसी ने उसका मांस चक्खा तो मजेदार लगा। फिर क्या था? उस घर में बार-बार आग लगने लगी, यहाँ तक कि दूसरों ने भी उसका अनुकरण किया।

चन्द्र०—बस यही बात क्षत्रियों की है। इनकी रसना इन्द्रियों को मांस का चस्का लग गया है और यह खाने का बहाना ढूँढ़ लेते हैं। क्षत्रियत्व से और मांस-भक्षण से कोई सम्बन्ध नहीं। न शिकार से! शिकार इसलिए नहीं खेला जाता कि किसी को कष्टों से बचाना है, अपितु अपने स्वाद के लिए।

ठा० अभ्यु०—खरगोश का शिकार तो अच्छा है, क्योंकि इससे खेती को हानि पहुँचती है।

चन्द्र०—शिकार किसी का भी अच्छा नहीं। इससे निर्दयता और निरंकुशता का अभ्यास बढ़ता है। इङ्गलैण्ड में खरगोश के शिकार की बड़ी प्रथा है और हिन्दुस्तानियों ने उन्हीं से इस व्यसन को सीखा है। इङ्गलैण्ड के रईसों में यह व्यसन इतना अधिक है कि वे पार्कों में खरगोश को सुरक्षित रखते हैं और सिवाय रईस के किसी को खरगोश मारने की आज्ञा नहीं होती। यदि खेती की रक्षा ही खरगोश के मारने का उद्देश्य होता तो खरगोश की रक्षा क्यों की जाती और दूसरों को मारने का क्यों निषेध किया जाता? वस्तुतः मनोविनोद ही शिकार का उद्देश्य है। यह मनोविनोद निकृष्ट श्रेणी का है, क्योंकि वह मनोविनोद क्या जिससे दूसरे की जान जाए? आपने इङ्गलैण्ड के पुराने किस्से पढ़े होंगे कि छिपकर खरगोश का शिकार करनेवालों को पोचर (Poacher) कहते हैं और उनको वही दण्ड मिलता है जो चोर को।

मुक०—हाँ! हाँ! कहा जाता है कि लूसी नामक रईस ने शेक्सपियर को इसी अपराध में दण्ड दिलवाया था।

चन्द्र०—ठीक! मेरा तात्पर्य यह है कि मांस-भक्षण और शिकार का व्यसन यह दो ऐसे अवगुण हैं, जिन्होंने क्षत्रियों को क्षत्रिय नहीं

Scanned by CamScanner

रहने दिया। रक्षक से भक्षक बना दिया है, इसीलिए तो संसार की शासन विधि ठीक नहीं होने पाती। शासक भक्षक हो जाए तो रक्षा कौन करे? शराब की बोतल में दूध भी शराब हो जाता है। बहुत से वीर क्षत्रियों में दया का भाव है। अङ्कुर है, परन्तु मांस-भक्षण के कारण दया भी दूषित हो गई है। परमार्थ में स्वार्थ का मिश्रण हो गया है।

ठा० अभ्यु०—क्या राजा रामचन्द्र शिकार नहीं खेलते थे?

चन्द्र०—खेलते होंगे! यह एक वैयक्तिक प्रश्न है। किसी एक व्यक्ति के करने से कोई दोष गुण नहीं हो जाता। या तो राजा रामचन्द्र शिकार नहीं करते होंगे या यदि करते होंगे तो मनु शास्त्र के अनुसार वह अधर्म है?

सेठ लल्लू०—क्या श्री रामचन्द्रजी को आप अधर्मी कहोगे?

चन्द्र०—मैं क्यों कहूँ? इतिहास इतिहास है और धर्मशास्त्र धर्मशास्त्र! मैं नहीं कहता कि श्री रामचन्द्र अधर्मी थे, परन्तु यदि कोई कहता है कि वे शिकार खेलते थे तो मैं डङ्के की चोट कहूँगा कि वे मानव धर्मशास्त्र के अनुसार बुरा करते थे।

राम०—क्या आपको श्री रामचन्द्र के शिकार खेलने पर सन्देह है?

चन्द्र०—बहुत कुछ? देखिये मारीच-बध के सम्बन्ध में क्या लिखा है? मारीच को देखकर सीताजी कहती हैं—

आर्यपुत्राभिरामोऽसो मृगो हरति मे मनः।
आनयैनं महाबाहो क्रीडार्थं नो भविष्यति॥ १॥
इहाश्रमपदेऽस्माकं बहवः पुण्यदर्शनाः।
मृगाश्चरन्ति सहिताश्चमराः सृमरास्तथा॥ २॥
ऋक्षाः पृषतसंधाश्च वानराः किन्नरास्तथा।
विहरन्ति महाबाहो रूपश्रेष्ठा महाबलाः॥ ३॥
नो चान्यः सदृशो राजन् दृष्टः पूर्वं मृगो मया।
तेजसा क्षमया दीप्त्या यथाऽयं मृगसत्तमः॥ ४॥
नानावर्णविचित्रांगो रत्नभूतो ममाग्रतः।
द्योतयन् वनमव्यग्रं द्योतते शशिसन्निभः॥ ५॥
अहो रूपमहो लक्ष्मीः स्वरसं पञ्चशोभना।
मृगोऽद्भुतो विचित्रांगो हृदयं हरतीव मे॥ ६॥

Scanned by CamScanner

यदि ग्रहणमभ्येति जीवन्नेव मृगस्तव।
आश्चर्यभूतं भवति विस्मयं जनयिष्यति॥ ७ ॥
समाप्तवनवासानां राज्यस्थानां च नः पुनः।
अन्तः पुरे विभूषार्थो मृग एवं भविष्यति॥ ८ ॥
भरतस्यार्यपुत्रस्य श्वश्रूणां च मम प्रभो।
मृगरूपमिदं दिव्यं विस्मयं जनयिष्यति॥ ९ ॥
जीवन्न यदि तेभ्येति ग्रहणं मृग सत्तमः।
अजिनं नरशार्दूल रुचिरं तु भविष्यति॥ १० ॥

(वाल्मीकीय रामायण—अरण्य काण्ड, सर्ग ४३, १०-१९)

हे आर्यपुत्र, यह मृग ऐसा सुन्दर है कि मेरा मन हरता है। आप इसको पकड़ लीजिए। हम इसके साथ खेला करेंगे॥ १ ॥

हमारे आश्रम में बहुत प्रकार के मृग, चमर, सृमर, रीछ, बानर, किन्नर आदि आते हैं, परन्तु ऐसा सुन्दर मृग कभी नहीं आया॥ २,३,४ ॥

यह तो मेरे सामने अनेक चित्र विचित्र अङ्गोंवाला चन्द्रमा के समान शोभा दे रहा है और बड़ा मनोहर है॥ ५,६ ॥

अगर तुम इसको पकड़ लाओ तो हमारे लिए यह एक अद्भुत चीज होगी और जब बनवास समाप्त करके अपने देश को चलेंगे तो आपके भाई भरत और मेरी सासें इसको देखकर आनन्दित हुआ करेंगी॥ ७,८,९ ॥

यदि यह जीता न पकड़ा जाए तो इसका चर्म भी बड़ा अच्छा होगा॥ १० ॥

इन्द्र०—इससे तो सिद्ध होता है कि हिरण का शिकार उनका उद्देश्य न था।

चन्द्र०—फिर एक और बात है। कवियों ने बहुत-सी मन गढ़न्त बातें लिख दी हैं। श्री तुलसीदासजी के दो पद ही काफी है—

मीन पीन पाठीन पुराने
भर भर भार कहारन आने
(तुलसी रामायण अयोध्या काण्ड १९४)

इससे सिद्ध होता है कि श्री भरतजी मछलियाँ बहुत खाते थे। शायद तुलसीदासजी को अपने समय के किसी राजपूत जमीन्दार का ध्यान आ गया होगा।

Scanned by CamScanner

अपि च

स्त्रक् चन्दन वनितादिक भोगा।

देखि परष विस्मय सब लोगा॥ (अयोध्या० २१६।४)

कहिये! माला और चन्दन तो समझ में आ गया, क्योंकि यह आतिथ्य के सामान हो सकते हैं, परन्तु 'वनिता' का क्या अर्थ? किसी अतिथि के लिए 'वनिता' का भोग पहुँचाना किस सत्कार की रीति है? क्या भरतजी विषयी थे? वह भरत जो अपनी तपस्या के लिए प्रसिद्ध थे, उन भरत के आतिथ्य के लिए वनिताओं को भेजना! परन्तु कवि तो कवि हैं। भूत में वर्तमान का पुट देना कवियों का काम है। पुरानी बोतल में नई शराब भरना कवियों की आदत है। तुलसीदास स्वयं तो सन्त थे। वह अपने समकालीन क्षत्रियों के स्वभावों से भी परिचित रहे होंगे। उन्होंने समझ लिया होगा कि क्षत्रियों के लिये तो मनु ने लिखा है—

न मांस भक्षणे दोषः न मद्ये न च मैथुने।

उनके समय में दयानन्द का सत्यार्थप्रकाश नहीं बना था। यह स्वामी दयानन्द का काम था कि उन्होंने वीरतापूर्वक यह लिख दिया कि यह क्षेपक है। किसी वाममार्गी का मिलाया हुआ है। इसी प्रकार वाल्मीकीय रामायण में भी बहुत क्षेपक हैं। मारीच की समस्त कथा में कितना सत्य है और कितना झूठ यह विचारणीय है। यदि राम शिकार करते होते तो उनके आश्रम पर हिरण निर्भीकता से क्यों आया करते? आगे चलकर लिखा है कि राम ने मारीच को शत्रु समझकर मारा था, क्योंकि लक्ष्मण ने पहले ही कह दिया था कि यह मृग नहीं, अपितु मारीच है—

यदि वायं तथा यन्मां भवेद् वदसि लक्ष्मण।

मायैषा राक्षसस्येति कर्तव्योस्य वधो मया॥

(वाल्मीकि०—अरण्यकाण्ड ४३।३८)

मांस-भक्षण का इससे कोई सम्बन्ध नहीं।

राम०—यज्ञों में पशुहिंसा होती है या नहीं।

चन्द्र०—अब बहुत देर हो गई है। इस विषय को फिर लिया जायेगा। कल का अवकाश रखिये। मुझे अन्यत्र जाना है, परसों यहीं मिलेंगे।

✿

Scanned by CamScanner

सत्रहवीं वार्त्ता

यज्ञ में पशुवध

अभ्यु०—श्री पं० चन्द्रदेवजी नमस्ते! मांस-भक्षण के प्रश्न के साथ यज्ञ का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। आपने कहा न था कि हम इसको लेंगे।

चन्द्र०—आज! सही!

कबीर ब०—कुर्बानी में जानवर मारना पाप नहीं। वह तो खुदा के लिए मारा जाता है। खुदा ने हमको सैकड़ों नियामतें दी हैं। क्या हम उसके लिए कुछ न करें?

चन्द्र०—आप खुदा के लिए कर ही क्या सकते हैं? क्या खुदा भूखा है, जो आप उसको बलि चढ़ाते हैं? क्या खुदा को आपकी बलि की जरूरत है? क्या यही खुदा के उपकारों का बदला है कि आप खुदा के बच्चों को ही मार-मार कर उसके लिए पहुँचावें? मौलवी साहेब, इससे तो खुदा की तौहीन होती है। यदि खुदा को किसी जानवर की जरूरत होती तो वह स्वयं ही मार डालता। क्या जितने पशु-पक्षी और मनुष्य मरते हैं, उनको खुदा अपने खाने के लिए मारता है? और क्या जितने पशु-पक्षी खुदा या किसी देवी देवता के नाम पर कुर्बान किये जाते हैं, उनको खुदा या वे देवी-देवता खाते हैं? हम तो देखते हैं कि खुदा बेचारे का नाम होता है और खाते हैं मुजाविर या पण्डे पुजारी? यह तो महापाप है कि काम तो करें अपने स्वार्थ के और नाम लगावें खुदा या देवी देवताओं का।

राम०—यज्ञ में मारे हुए पशु स्वर्ग को जाते हैं—ऐसा कहा जाता है।

चन्द्र०—इसकी विवेचना के लिए तो चारवाक का नीचे का श्लोक ही पर्याप्त है—

पशुश्चेत् निहतः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति।
स्वपिता यजमानेन तत्र कस्मान् च हिंस्यते॥

यदि ज्योतिष्टोम यज्ञ में मारा हुआ पशु स्वर्ग को जाता है तो यजमान अपने पिता को मार कर स्वर्ग क्यों नहीं पहुँचाता।

स्वर्ग की इच्छा तो सबकी होती है। यदि यज्ञ करानेवाले पण्डितों को विश्वास होता कि यज्ञ में मारा हुआ पशु स्वर्ग को जाता है तो यह पण्डित लोग दूसरों को हाथ जोड़कर प्रेरणा करते कि नर यज्ञ

Scanned by CamScanner

करो और हमारी बलि दे दो जिससे हम स्वर्ग में चले जाएँ। जन्म भर के संध्या वन्दन तथा तपश्चर्या की क्या आवश्यकता?

ठा०—हमने सुना है कि यज्ञ तो बिना पशु की बलि दिये पूर्ण ही नहीं होता।

चन्द्र०—यह महापाप है और धूर्त स्वार्थी वाममार्गियों की करतूत है। यज्ञ और पशु हत्या से तो कोई सम्बन्ध ही नहीं।

कबीर०—यज्ञ के मानी है कुर्बानी के।

चन्द्र०—नहीं मौलवी साहेब! 'यज्ञ' शब्द का अर्थ है (१) देव पूजा यानी खुदा की इबादत, (२) या संगतिकरण या चीजों को मिलाकर नई चीजें बनाना जिसको कीमिया कहते हैं। (३) और दान। इनसे किसी पशु को मारना किसी अर्थ में शामिल नहीं है।

कबीर०—कहते हैं कि नर यज्ञ में आदमी मारे जाते थे।

चन्द्र०—यह भी गप है। यदि नर यज्ञ में आदमी मारे जाते होते तो पितृयज्ञ में माँ-बाप मारे जाते और देव यज्ञ में देवता और अतिथि यज्ञ में अतिथि या मेहमान। यह बात तो किसी धूर्त की चलाई प्रतीत होती है। तभी से कुछ पुस्तकों में भी ऐसी कुत्सित बातें मिला दी गईं। देखिये ब्रह्मयज्ञ का अर्थ है खुदा की इबादत (ईश्वर की पूजा) न कि ब्रह्म को मार कर कुर्बान करना। पितृ-यज्ञ का अर्थ है, माता-पिता की सेवा करना न कि माता-पिता को कुर्बान करना। अतिथि यज्ञ का अर्थ है आए हुए मेहमान की खातिर करना न कि उस बेचारे को मार कर स्वर्ग पहुँचाना।

राम०—अश्वमेध और नरमेध का क्या अर्थ है?

चन्द्र०—इसके ऊपर स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में यह लिखा है—

राष्ट्रं वा अश्वमेधः। (शतपथ ब्राह्मण १३।१।६।३)

अन्नं हि गौः। (शत० ४।३।१।२५)

अग्निर्वा अश्वः।

आज्यं मेधः। (शतपथ ब्राह्मण)

घोड़े गाय आदि पशु तथा मनुष्य मार के होम करना कहीं नहीं लिखा। केवल वाममार्गियों के ग्रन्थों में ऐसा अनर्थ लिखा है, किन्तु यह भी वाममार्गियों ने चलाई और जहाँ-जहाँ लेख है, वहाँ भी

Scanned by CamScanner

वाममार्गियों ने प्रक्षेप किया है। देखो! राजा न्याय धर्म से प्रजा का पालन करे, विद्यादि का देनेहारा यजमान और अग्नि में घी आदि का होम करना अश्वमेध, अन्न, इन्द्रियाँ, किरण, पृथिवी आदि को पवित्र रखना गोमेध, जब मनुष्य मर जाए तो उसके शरीर का विधिपूर्वक दाह करना नरमेध कहाता है। (सत्यार्थप्रकाश समु० ११)

ला० त०—यह तो आपने ऐसी बात कही जो न कहीं देखी न सुनी।

चन्द्र०—आपने कौन-कौन से शास्त्र देखें हैं?

तस०—कोई नहीं।

चन्द्र०—तो फिर आप कैसे कहते हैं?

तस०—पण्डितों से सुनते भी तो हैं।

चन्द्र०—कुछ अपनी बुद्धि भी तो लगाइये। जब देश के बुरे दिन आते हैं तो लोग अन्धविश्वासी होकर धूर्तों के पीछे चलने लगते हैं।

तस०—आप ऐसे लोगों को धूर्त क्यों कहते हैं? अपने-अपने धर्म की बात है। आप आर्यसमाजी हैं वे सनातनधर्मी हैं। उनके धर्म में ऐसा ही लिखा है। आपको क्या अधिकार है कि किसी को धूर्त कहें?

चन्द्र०—लालाजी आप बुरा मान गये। तब मालूम होता जब आपके ऊपर बीतती। जिस मनुष्य ने कलकत्ता की काली या विन्ध्याचल की देवी पर बलि चढ़ाने की प्रथा डालकर लाखों बकरों की हत्या कराई, उसको हम किस नाम से पुकारें? यदि उसको यह अधिकार था कि ऐसी पापमयी प्रथा को चला देता तो क्या हमको यह भी अधिकार नहीं कि हम उसको उचित नाम से सम्बोधित कर सकें? यदि किसी दिन कोई नरमेध का भक्त आपको पकड़ कर नरमेध करने लगे तो देखें आप क्या कहेंगे? इसमें सनातन धर्म और आर्यसमाज का तो प्रश्न ही नहीं। जिन बिचारों के गलों पर छुरी चलती है, वे न तो आर्य हैं, न सनातनी, न मुसलमान। उनको मारने और खानेवाले स्वार्थी हैं। वस्तुत: यह भी मांसाहारियों की तरकीब है कि एक ऐसी बात सुना दी कि धर्म का धर्म और स्वाद का स्वाद! क्या ईश्वर रक्तपात चाहता है?

कबीर०—हमारे धर्म में तो कुर्बानी की इजाजत है?

चन्द्र०—क्या आप बता सकते हैं कि यह कुर्बानी की प्रथा कब से चली?

Scanned by CamScanner

कबीर०—हमारी किताबों में लिखा है कि हजरत इब्राहीम को हुक्म हुआ था कि सबसे प्यारी चीज को खुदा के नाम पर कुर्बान कर दो। उनकी सबसे प्यारी चीज उनका एकलौता बेटा ईस्माईल था। उन्होंने ईस्माईल को जिबह करने के लिए छुरी उठाई तो खुदा ने अपनी कुदरत से इस्माईल की जगह एक बकरी को रख दिया और इस्माईल को बचा लिया।

चन्द्र०—इसका भाव तो अच्छा है, परन्तु प्रथा बहुत बुरी है। भाव तो यह है कि हजरत इब्राहीम ऐसे भक्त थे कि खुदा की राह में अपनी प्यारी से प्यारी वस्तु का त्याग करने को तैयार थे, परन्तु पहली बात तो यह है कि खुदा की राह क्या है? क्या खुदा अपने लिए किसी पशु या आदमी की कुर्बानी चाहता है? कदापि नहीं। दूसरी बात यह है कि यदि कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य की भलाई के लिए अधिक से अधिक त्याग करता है तो वही उसकी कुर्बानी या यज्ञ है। इसको वेदों में श्रेष्ठतम कर्म कहा है। खुदा की राह यही है कि दूसरे प्राणियों का (यानी खुदा के बन्दों का) भला हो। यदि आप उनकी भलाई के लिए अपनी प्यारी से प्यारी चीज या जान तक को देने के लिए तैयार हैं तो आप पुण्यात्मा हैं। परोपकार यज्ञ का सबसे बड़ा और मुख्य अङ्ग है। कुर्बानी कीजिए अपनी, न कि दूसरों की। आजकल जो आप लोग कुर्बानी करते हैं, वह अपनी प्यारी चीज की नहीं। क्या आप कह सकते हैं कि गाय से अधिक कोई चीज आपको प्यारी नहीं? हजरत इब्राहीम के लिए इस्माईल सबसे प्यारी चीज थे। यदि आप हजरत इब्राहीम की पैरवी करते तो गाय, बकरा या ऊँट की कुर्बानी कभी न करते।

राम०—यदि हम अपनी कुर्बानी न कर सकें तो अपने बदले में किसी पशु को कुर्बान कर दें।

चन्द्र०—ईश्वर के न्याय को न समझकर लोग ऐसा कहते हैं, त्याग में प्रतिनिधित्व नहीं चलता। यदि आपको किसी जुर्म में दो वर्ष की सजा हो जाए तो क्या आप अपने बदले एक मजदूर को किराये पर जेल भेज सकते हैं? क्या गवर्नमेण्ट मान लेगी?

राम०—नहीं।

चन्द्र०—तो क्या खुदा को ऐसा मूर्ख समझा है कि वह आपके बदले गाय, बकरे या ऊँट को स्वीकार कर लेगा?

Scanned by CamScanner

मुकर्जी०—मुसलमानों में यह प्रथा कैसे पड़ी?

चन्द्र०—यहूदियों में कुर्बानी की प्रथा थी, उन्होंने इसको वाममार्गियों से सीखा था। जब भारतवर्ष में वेदों का यथार्थ ज्ञान नहीं रहा तो लोगों ने कुछ का कुछ समझ लिया। इसी से सती की प्रथा चली। सती कहते हैं, पतिव्रता स्त्री को। प्रत्येक पतिव्रता स्त्री जो कुलटा नहीं है, सती है, परन्तु लोगों ने समझा कि सती स्त्री वही है, जिसको उसके पति की लाश पर जलाया जाए। इसी प्रकार यज्ञ में पशु-हिंसा होने लगी। यह प्रथा दूसरे देशों में पहुँची। यहूदियों से दो धर्म निकले! एक ईसाई और दूसरे मुसलमान। ईसाईयों ने तो यह कहकर पशु-बलि बन्द कर दी कि ईसा मसीह सबके बदले कुर्बान हो गये, अब जरूरत नहीं, परन्तु मुसलमानों ने शरअ इब्राहीम समझकर इसको रहने दिया। हिन्दुओं में भी देवी देवताओं के पुजारियों ने अपने खाने के लिए कुर्बानी की प्रथा को जारी रखा।

राम०—शतपथ ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण तथा गृह्यसूत्रों में पशु वध का विधान आता है?

चन्द्र०—हाँ, कहीं-कहीं उल्लेख है, परन्तु वह प्रक्षिप्त है और महापाप है।

अन्यत्र कई स्थलों में इसका निषेध किया है। देखिये—

देवोपहार व्याजेन यज्ञव्याजेन येऽथवा।
हनन्ति जन्तून् गतघृणा घोरां ते यान्ति दुर्गतम्॥

जो लोग देवता पर चढ़ाने के बहाने या यज्ञ के बहाने पशुओं को मारते हैं, वे निर्दयी घोर दुर्गति को प्राप्त होते हैं।

अन्धे तमसि मज्जामः पशुभिर्ये यजामहे।
हिंसा नाम भवेद् धर्मो न भूतो न भविष्यति॥

हम में जो लोग यज्ञ में पशु मार कर डालते हैं, वे महा अन्धकार को प्राप्त होते हैं। हिंसा न तो कभी धर्म हुआ न धर्म होगा।

प्राणिघातात् तु यो धर्ममीहते मूलमानसः।
स वाञ्छति सुधावृष्टिं[१] कृष्णाहिमुख कोटरात्॥

जो मूढ़ प्राणियों को मारकर धर्म कीइच्छा करता है, वह काले साँप के मुँह से अमृतवर्षा चाहता है।

---

१. व्यास वचन (देखो स्याद्वाद मञ्जरी पृष्ठ ८३)

Scanned by CamScanner

राम०—शतपथ में लिखा है कि यज्ञ में मेषा मेषी आटे के बना डाले जाएँ।

चन्द्र०—ऐसा प्रतीत होता है कि जब वाममार्गियों ने पशु बलि की प्रथा चलाई तो कोई दयालु यजमान इसको पसन्द न करता होगा। उस समय पुजारियों ने उससे कहा होगा कि यदि तुम सचमुच के मेषा मेषी मारना नहीं चाहते तो आटे के ही बनाकर चढ़ा दो। उस मानस को यह न सूझा कि यदि ईश्वर मेषा मेषी चाहता है तो आटे के मेषा मेषी से वह कैसे मान जायेगा? क्या ईश्वर बच्चा है जो इस प्रकार की बातों से सन्तुष्ट हो जाता है? देखिये यज्ञ तो किया जाता है पशुओं की रक्षा के लिए। कुछ प्रमाण सुनिये—

(१) **यजमानस्य पशून् पाहि।**

हे ईश्वर यजमान के पशुओं की रक्षा कर।

(२) **वर्धय अस्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसा।**

हमको सन्तान, पशु और ब्रह्म ज्ञान द्वारा बढ़ाओ!

(३) **अध्वर इति यज्ञ नाम। ध्वरति हिंसा कर्म॥**

तत् प्रतिषेधः (निरुक्त १।८)

यज्ञ का नाम अध्वर है। 'ध्वर' कहते हैं, हिंसा को। हिंसा का उलटा अहिंसा अध्वर या यज्ञ।

(४) शान्तिपर्व महाभारत अ० २६३ लिखा है—

अघ्न्या इति गवां नामक एता हन्तुमर्हति।
महच्च् चकाराकुशलं वृषं गां वाऽलभेत्तु यः॥

गाय को 'अघ्न्या' कहते हैं, अर्थात् उसको कभी मारना नहीं चाहिए, जो गाय या बैल को मारता है, वह बड़ा अनर्थ करता है।

राम०—सतयुग में यज्ञ में पशु मारने का विधान था। कलियुग में निषेध है। उस समय लोगों में यह सामर्थ्य थी कि मरे पशु को जिला देते थे।

चन्द्र०—वह भी गप है। वेद तो सतयुग की ही धर्म पुस्तक है। जो सतयुग में धर्म है, वह कलियुग में अधर्म नहीं हो सकता। मार कर जिलाने की बात मिथ्या है। भला जब मार कर आग में जला दिया तो पहला शरीर तो भस्म हो गया। अब तो नया ही मिल सकता है। सो नया शरीर अवश्य मिलता है, चाहे यज्ञ में जला दो अथवा

Scanned by CamScanner

बलात्कार तलवार से गला काट दो। ईश्वर तो दूसरा शरीर देगा ही, परन्तु तुमको पाप लगेगा। इससे कैसे बचोगे? किसी ने ठीक कहा है—

यूपं छित्वा पशून् हत्वा कृत्वा रुधिरकर्दमम्।
यद्येवं गम्यते स्वर्गे नरके केन गम्यते?

यूप को काटकर और पशुओं को मार कर तथा उनका रक्त बहाकर जो स्वर्ग मिले तो नरक को कौन जायेगा?

राम०—देखो वेद में मारने की आज्ञा है?

त्वत्र शत्रून वृश्च प्रवृश्च संवृश्च दह प्रदह संदह।

(अथर्व० १२।५।६२)

चन्द्र०—ठीक है। स्पष्ट तो है कि शत्रुओं को मारने की आज्ञा है। दुष्टों को, चोरों को, सिंह आदि मनुष्य जाति के स्वभाव वैरियों को। बकरे, मुर्गे, गाय, ऊँट, सुअर तो आपके शत्रु नहीं। खेद है कि लोग वेदों का प्रमाण देने में धोखे से काम लेते हैं। वेदों के पढ़ने में सावधानी चाहिए।

अठारहवीं वार्त्ता

मांस और बल

अभ्यु०—मांस-भक्षण के विरुद्ध जो कुछ अब तक कहा गया है, उससे मैंने यही परिणाम निकाला है कि मांस-भक्षण बहुत बुरी चीज है। मैं स्वयं मांस छोड़ चुका हूँ, परन्तु यह एक प्रसिद्ध बात है कि मांसाहारी बलवान् होते हैं।

चन्द्र०—शरीर में, बुद्धि में या आत्मा में?

अभ्यु०—सब में।

चन्द्र०—यह गलत है। सर्वथा गलत है। इतिहास से गलत, विज्ञान से गलत! अनुभव से गलत।

अभ्यु०—कैसे? हिन्दू लोग मांस नहीं खाते, इसलिए दुर्बल हैं। अंग्रेजों और मुसलमानों को देखो। कैसी उन्नति है।

चन्द्र०—अंग्रेज कितने दिनों से मांस खाने लगे हैं?

अभ्यु०—चिर काल से।

चन्द्र०—इनकी उन्नति कितने दिनों से हुई है?

Scanned by CamScanner

अभ्यु०—तीन चार सौ वर्ष से।

चन्द्र०—क्या वह पहले भी मांस खाते थे?

अभ्यु०—हाँ।

चन्द्र०—फिर उन्नत क्यों नहीं थे?

अभ्यु०—आप ही बतावें।

चन्द्र०—वस्तुतः इनकी उन्नति का कारण मांस-भक्षण नहीं, अपितु कई अन्य गुण हैं। हिन्दुओं के पतन का कारण उनका निरामिषीय भोजन नहीं, अपितु अनेक दुर्गुण हैं। यदि मांस-भक्षण ही उन्नति का कारण होता तो ग्रीनलैण्ड, तिब्बत या अफ्रीका के जंगली लोग बड़े उन्नत होते। देखो अरब के लोग मुसलमान होने से पहले भी मांस खाते थे, परन्तु उनकी उन्नति नहीं हुई थी। अरब की उन्नति का कारण मांस-भक्षण नहीं। कहते हैं कि मुहम्मद साहेब से पहले अरब के लोग ऐसे क्रूर थे कि अपनी लड़कियों को जीवित गाड़ देते थे।

कबीर०—ठीक है। पण्डितजी ऐसा ही था। हमारे हजरत ने इनको सभ्यता सिखाई।

अभ्यु०—कई लोग कहते हैं कि यदि हिन्दू मांस खाने लगें तो इनकी उन्नति हो जाए।

चन्द्र०—यह तो उन्नति करने का बड़ा सरल उपाय है। बूचड़खाने बढ़ाओ और स्वतन्त्र हो जाओगे। मानो कोई मांसाहारी जाति न कभी हारती है न दासता को प्राप्त होती है। ठाकुर साहेब? क्या यह आपकी समझ में आता है?

अभ्यु०—यह तो कहना कठिन है, परन्तु मांस न खानेवालों का हृदय कोमल होता है और वह अपने शत्रुओं से डर जाते हैं।

चन्द्र०—क्या क्रूरता अच्छी चीज है?

अभ्यु०—नहीं?

चन्द्र०—क्या संसार पर परमात्मा का राज्य नहीं?

अभ्यु०—है।

चन्द्र०—तो क्या परमात्मा चाहता है कि क्रूर राज करें और कोमल दास रहें?

अभ्यु०—ऐसा तो नहीं।

चन्द्र०—तो क्या जैसा ईश्वर चाहता है, वैसा नहीं होता?

Scanned by CamScanner

अभ्यु०—तो क्या ईश्वर चाहता है कि हिन्दू दास रहें?

चन्द्र०—ईश्वर न हिन्दू है न मुसलमान। व किसी का पक्षपाती नहीं। न किसी का शत्रु। जिनमें अवगुण होंगे वह दास रहेंगे ही?

अभ्यु०—हिन्दुओ में क्या अवगुण हैं?

चन्द्र०—अविद्या, भ्रमजाल, आपाधापी और सङ्गठन का अभाव।

अभ्यु०—निरामिष भोजन नहीं?

चन्द्र०—नहीं, यह तो गुण है, परन्तु अन्य अवगुणों ने इस गुण को छिपाया हुआ है। यदि दूध में संखिया मिला दी जाए तो क्या दूध लाभ देगा?

अभ्यु०—तो क्या मांस-भक्षण से मनुष्य बलवान् नहीं होता?

चन्द्र०—मैं नहीं मानता।

अभ्यु०—प्रमाण दीजिये।

चन्द्र०—जिन तत्त्वों से मांस बनता है, वह वनस्पति में थे या नहीं?

अभ्यु०—थे?

चन्द्र०—क्या मांस वह तत्त्व है, जिसके लिए भोजन किया जाता है?

अभ्यु०—समझा नहीं।

चन्द्र०—मेरा आशय यह है कि जो भोजन हम करते हैं, उसका कुछ उद्देश्य होता है?

अभ्यु०—हाँ होता है।

चन्द्र०—क्या उद्देश्य होता है?

अभ्यु०—शरीर में ऐसी शक्ति उत्पन्न करना, जिससे शरीर काम योग्य हो सके।

चन्द्र०—शक्ति उत्पन्न करना, मांस उत्पन्न करना।

अभ्यु०—मांस उत्पन्न होगा तो शक्ति भी उत्पन्न होगी।

चन्द्र०—पहले मांस या पहले शक्ति? क्या मांस का होना शक्ति की पहचान है? क्या जितना मांस होगा उतनी ही शक्ति होगी?

अभ्यु०—यह बात नहीं, मांस बढ़ सकता है और शक्ति कम हो सकती है। बहुत से मोटे लोग दुर्बल होते हैं।

चन्द्र०—इससे सिद्ध हुआ कि जो भोजन हम खाते हैं, उससे

Scanned by CamScanner

बनी हुई अन्तिम वस्तु मांस नहीं।

अभ्यु०—जो वस्तु हम खाते हैं, उसके तीन भाग होते हैं। जो पचता नहीं वह तो मल-मूत्र या रोग का भाग होता है। जो पचता है उसका स्थूल अंश मांस होता और सूक्ष्म मस्तिष्क बनाता है?

चन्द्र०—मैं मानता हूँ। अच्छा अब उदाहरण लीजिये। बकरे ने घास खाई। उसका जो अंश पच सका उसके स्थूल अंश का मांस बना और सूक्ष्म अंश का बकरे का मस्तिष्क।

अभ्यु०—ठीक।

चन्द्र०—आप उस मांस को खाते हैं, जिनमें से मस्तिष्क बनानेवाला अंश निकल चुका है।

अभ्यु०—यह बात तो है।

चन्द्र०—तो मांस वह अंश है वनस्पति का जिसमें से मस्तिष्क बनानेवाले अंश लिए जा चुके हैं। केवल फोक शेष हैं। फोक तो वही खायेगा, जिसमें बुद्धि कम हो और जो बुद्धि को और भी कम करना चाहे।

अभ्यु०—यह तो समझ में आता है।

चन्द्र०—फिर बल का प्रश्न नहीं रहता।

बुद्धिर्यस्य बलं तस्य निर्बुद्धेस्तु कुतो बलम्।

ला० तसल्लीराम—यह तो आपने ठीक सिद्ध किया।

चन्द्र०—आज तो लड़ाई भी बुद्धि द्वारा ही होती है। केवल मांस बढ़ाने से कुछ नहीं होता।

अभ्यु०—शेर मांस खाता है, अत: बड़ा बलवान् होता है।

चन्द्र०—भेड़िया मांस खाता है और हाथी मांस नहीं खाता? फिर हाथी क्यों बलवान् है? यदि मांस न खाकर आपको हाथी का सा बल और हाथी की सी बुद्धि मिल जाए तो क्या आप उसको शेर का सा बल और शेर की जैसी बुद्धिहीनता की अपेक्षा अच्छा न समझेंगे?

सेठ लल्लू०—अवश्य! भूसा खाकर बैल जितना बलवान् हो जाता है, उतना मांस खाकर आदमी कभी नहीं हो सकता है।

ला० तस०—परन्तु यह तो प्राणी की पाचनशक्ति के ऊपर है। सुअर विष्टा खाता है और उसमें से अपने शरीर के लिए उत्तम-उत्तम तत्त्व छाँट लेता है। विष्टा क्या हैं? भोजन का वह भाग जिसे मनुष्य

Scanned by CamScanner

पचा नहीं सका।

इन्द्र०—यह ठीक है, परन्तु इससे मांसाहारियों की युक्ति तो पुष्ट नहीं होती। सुअर जो कुछ खाता है, उससे मस्तिष्क भी तो सुअर का जैसा ही बनता है, मनुष्य का जैसा नहीं। कौन चाहता है कि उसको सुअर का मस्तिष्क मिले? सुअर प्राणियों में चातुर्य के लिए प्रसिद्ध नहीं है?

कबीर०—हरगिज नहीं! किस मरदूद का नाम ले लिया?

अभ्यु०—देखिये। जैनी मांस नहीं खाते। उनकी संख्या दिन प्रतिदिन घटती जाती है। वे एक मरती हुई जाति (Dying Nation) मात्र हैं।

चन्द्र०—जैनियों के घटने का कारण मांस से परहेज नहीं है। बहुत-सी मांस खानेवाली जातियाँ भी नष्ट हो गईं। जैनियों के घटने का कारण है उनकी बहुत-सी आन्तरिक त्रुटियाँ। इनको हम गिनाकर विषय से बाहर नहीं जाना चाहते।

अभ्यु०—यह कहा करते हैं कि जो मांस नहीं खाते उनमें पुसंत्व नहीं होता। मांस काम शक्ति को बढ़ाता है।

कबीर बख्श—हम मुसलमानों में यह कहावत है कि यदि हिन्दू लोग उर्द की दाल न खाएँ तो उनमें सन्तान न उत्पन्न हो।

चन्द्र०—यह सब गपोड़े हैं, जो मांस खानेवालों ने बना रखे हैं। क्या वनस्पति खानेवाले पशुओं के सन्तान नहीं होती?

अभ्यु०—होती तो है।

चन्द्र०—तो सिद्ध हुआ कि वनस्पति खानेवालों में भी कामशक्ति उत्पन्न होती है। अन्यथा वनस्पति खानेवाली जातियाँ सर्वथा लुप्त हो गई होती।

अभ्यु०—होती तो है, परन्तु कम!

चन्द्र०—शेर के सन्तान अधिक होती है या खरगोश के।

अभ्यु०—खरगोश के।

चन्द्र०—खरगोश तो मांसाहारी नहीं है और शेर पूरा मांसाहारी ही है। इग्गसे तो सिद्ध हुआ कि अत्यन्त मांसाहारी सन्तानोत्पत्ति के काम के : ँ होते।

सेठ ः लू०—वाह पण्डितजी! यह तो आपने अच्छी युक्ति दी।

Scanned by CamScanner

चन्द्र०—पशुओं में सबसे अधिक विषय-भोग दो जातियों में पाया जाता है। खरगोश और बन्दर में। यह दोनों शाकाहारी पशु हैं। इसलिए यह कहना गलत है कि मांस न खानेवालों के सन्तान नहीं होती। दूसरी बात यह है कि काम-शक्ति और काम-इच्छा में भेद है। सन्तान उसी के अच्छी होगी जो काम-शक्ति को वश में भी रख सके। विषयी लोगों के भी सन्तान नहीं होती या खराब होती है। मांस खानेवाले अपने मन को वश में नहीं रख सकते। उनमें बहुविवाह आदि कुप्रथाएँ बढ़ जाती हैं, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि उनकी सन्तान बढ़ जाएँ।

अभ्यु०—जहाँ मांस के सिवाय कुछ मिले ही नहीं, वहाँ क्या किया जाए?

चन्द्र०—भारतवासियों के लिए तो यह प्रश्न है ही नहीं, अतः भारतवासियों को तो तुरन्त ही मांस छोड़ देना चाहिए। भारतीय मांसाहारी न केवल हिंसा का ही पाप करते हैं, अपितु निरामिष भोजियों की भी बड़ी भारी हानि करते हैं। हजारों बकरियाँ जो मांस के लिए प्रतिदिन मारी जाती हैं, यदि न खाई जावे तो दूध की नहरें बहने लगें। आजकल दूध के अभाव का चारों ओर शोर है, परन्तु कोई नहीं सोचता कि दूध देनेवाले पशुओं को मारकर दूध कैसे मिल सकता है। भारतवर्ष में तरकारियाँ और फल बहुत होते हैं और बहुत हो सकते हैं, अगर लोग मांस-भक्षण छोड़कर तरकारियों के अधिक उत्पन्न करने का आन्दोलन करें। भारत के कई भागों में शाक का अभाव है। यद्यपि भूमि अच्छी है। यदि राज्य की ओर से तरकारियाँ अधिक बोने का आन्दोलन किया जाए तो मांस खाने की भारत में तो कुछ भी आवश्यकता न हो। रही वह जगहें जहाँ मांस ही मांस मिलता है। उनके विषय में यह बात है कि या तो मनुष्य को वहाँ रहना नहीं चाहिए या अपने भोजन का प्रबन्ध करना चाहिए। ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ मनुष्य चाहे और वनस्पति न उग सके। वस्तुतः मनुष्य ने मांस की प्रवृत्ति के कारण ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर रखी है। जैसे एक बार इङ्गलैण्ड में यह प्रथा चल पड़ी थी कि खेती मत करो, भेड़ें पालो जिससे मांस का भोजन बहुतायत से मिल सके। देखिये जहाँ पानी नहीं होता, वहाँ मनुष्य रेत पीकर नहीं रहता। कोई उपाय करता है कि दूसरे स्थानों से जल ला सके। यही हाल शाक भाजी का हो सकता है, परन्तु मांस को खाना ही हो तो बहुत से बहाने

Scanned by CamScanner

ढूँढ़े जा सकते हैं। लोग एक बात का विचार नहीं करते। बहुत से रोग मांस-भक्षण से ही उत्पन्न होते हैं। आप जानते हैं कि मांस रोग क्यों उत्पन्न करता है?

ला० तस०—बताइये।

चन्द्र०—मांस वस्तुतः सड़ी हुई चीज है।

ला० तस०—कैसे?

चन्द्र०—जब तक जीव शरीर में रहता है, उसमें दुर्गन्ध नहीं आती, परन्तु जीव के निकलते ही शरीर में एक विचित्र सड़न उत्पन्न होने लगती हैं। लाश को दो दिन घर में रखो ऐसी दुर्गन्ध आयेगी कि बैठा नहीं जायेगा। कोई मांसाहारी जीवित पशु का मांस नहीं खाता। मारकर खाते हैं। प्राण निकलते ही उसमें सड़न होने लगती है। यही रोगों का कारण है।

कबीर०—हम मुर्दार नहीं खाते जिबह करके खाते हैं।

चन्द्र०—जिबह करने के पश्चात् तो मुरदार ही हो जाता है। वह जीवित नहीं रहता।

अभ्यु०—सर्वथा हिंसा से बचना कठिन है। चलते-चलते चींटियाँ मर जाती हैं। कभी-कभी वायु से छोटे-छोटे कृमि हमारे मुँह से आकर टकरा जाते हैं और उनकी मृत्यु हो जाती है।

चन्द्र०—यह ठीक है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि यदि अहिंसा करना कठिन है तो उसे सर्वथा छोड़ दिया जाए। बेजाने पूछे चीटियों का मर जाना और बात है और जान बूझकर सैकड़ों गायों को और बकरों को मारना और बात। क्या हर एक मनुष्य सर्वज्ञ हो सकता है?

अभ्यु०—नहीं! कभी तो भूल करेगा ही!

चन्द्र०—तो क्या इसलिए पढ़ना बन्द कर दिया जाए? जब पूर्णज्ञानी नहीं हो सकते तो चार का पहाड़ा पढ़कर ही क्या करेंगे! यदि लोग ऐसा सोचने लगें तो मनुष्य जाति की क्या दशा हो जाए? वस्तुतः अधिक हिंसा तो मांस-भक्षण के कारण ही हुई है। यदि संसार में मांसाहारी मनुष्य न रहें तो हिंसा की मात्रा अत्यन्त कम हो जाए। मैं यह कई बार कह चुका हूँ कि यद्यपि मनुष्य कभी क्रोध में, कभी द्वेष से, कभी भूल से हिंसा कर बैठता है, परन्तु उस हिंसा की मात्रा बहुत कम होती है और समाज तथा राज की ओर से उसका प्रतिकार

Scanned by CamScanner

भी होता है, परन्तु मांस-भक्षण के लिए की जानेवाली हिंसा ऐसी हिंसा हैं जो व्यक्तिगत नहीं अपितु सांस्थिक (Institutional) है। समाज की ओर से दण्डनीय नहीं समझी जाती। समाज उसकी आज्ञा देता है, अतः वह अत्यन्त घृणित है।

ला० त०—एक मनुष्य मांस खाता है और दूसरा रिश्वत लेता या अपने माँ बाप को मारता है। कौन अधिक पापी हैं?

चन्द्र०—यह कठिन प्रश्न है। दो दोषों में कौन बड़ा है, यह तारतम्य कठिन है। परिस्थिति को देखकर और बहुत-सी बातों पर विचार करके ही उसका निर्णय किया जा सकता है, परन्तु जो दो गुण आपने गिनाये वे वैयक्तिक हैं। समाज उनको बुरा समझता ही है। खल्लमखुल्ला न कोई रिश्वत ले सकता है और न माँ बाप को मार सकता है। संसार में औरङ्गजेबों की संख्या अत्यन्त न्यून है, परन्तु यह बात याद रखनी चाहिए कि जिस दुर्गुण को समाज ने अपना लिया और अपनी ओर से प्रशंसा अथवा स्वीकारी का प्रमाण-पत्र दे दिया, वह दुर्गुण अत्यन्त भयानक है। मांस-भक्षण ऐसा ही दुर्गुण है। यह सम्भव है कि एक बहुत अच्छा आदमी केवल इसलिए मांसाहारी है कि उसके समाज में ऐसा करना बुरा नहीं समझा जाता, परन्तु इतने मात्र से उन प्राणियों के लिए कोई सन्तोष नहीं जिनका वध किया जाता है।

यदि कोई पुरुष बाल विवाह इसलिए करता है कि उसके समाज में ऐसी ही प्रथा है तो यद्यपि उसका वैयक्तिक दोष कम भी हो जाए फिर भी बाल विवाह की हानियाँ तो वैसी ही रहती हैं।

इस प्रकार के समाज-स्वीकृत दुर्गुण इसलिए और भी भयानक हैं कि उनमें अन्य दुर्गुणों के उत्पन्न करने की बीज शक्ति हैं। यदि एक मनुष्य ने अपने पिता का वध कर दिया तो इस दुर्गुण के अनुकरण की बहुत ही कम आशंका है, परन्तु मांसाहार अब वैयक्तिक नहीं, अपितु सांस्थिक दोष हो गया है, अतः उनके अनुकरण की अधिक सम्भावना है। यदि अकस्मात् ही कोई मनुष्य किसी का मांस खा बैठता तो हम उसको एक वैयक्तिक और आकस्मिक घटना कहते, परन्तु मांसभक्षण करनेवालों का एक दल है। जो पशुओं की हत्या के पक्ष में है। उसे हत्या ही नहीं समझते, इसीलिए यह महादोष है या दोषों का मूल है। इसलिए इसको तो यत्न करके दूर करना चाहिए।

Scanned by CamScanner

कबीर०—कई मजहबों में गोश्त खाना जायज है।

चन्द्र०—यह ठीक है, परन्तु मजहबों के प्रवर्त्तकों ने एक पक्ष को लेकर सुधार किया। उनके सामने यह दृष्टिकोण ही न रहा होगा। दृष्टान्त के लिए महात्मागाँधीजी को लीजिए, वे मांस नहीं खाते। मांस खाना बुरा भी समझते हैं, परन्तु वह काँग्रेस के केवल एक ध्येय को लेकर काम करते हैं, इसलिए जहाँ काँग्रेसवालों के लिए चरखा चलाना अनिवार्य है, जहाँ काँग्रेस के सिद्धान्त में मांस न खाने का नाम तक नहीं।

परन्तु एक बात है! प्रत्येक धर्म में कुछ पशुओं का मारना उचित और कुछ का मारना अनुचित समझा जाता है, इससे प्रतीत होता है कि उस समय कोई विचित्र परिस्थिति रही होगी, जिसके कारण कुछ पशुओं का मारना निषिद्ध बताया गया। क्या यह ठीक है कि मक्के की हद में विशेष अवसरों पर किसी जानदार का मारना विहित नहीं।

कबीर०—हाँ। ठीक है।

चन्द्र०—इससे स्पष्ट होता है कि वहाँ भी एक अंशीय सुधार अभीष्ट था।

मु०—बोद्ध देशों में तो सभी पशु खाये जाते हैं।

चन्द्र०—आप ठीक कहते हैं, परन्तु महात्मा बुद्ध के नाम पर यह कलङ्क है। जिस महान् आत्मा ने अहिंसा के प्रचार के लिए अपने प्राण दिये, उसके अनुयायी किसी पशु-पक्षी को न छोड़ें यह बड़े दुःख की बात है, परन्तु किया भी क्या जाए? उनको समझाने के लिए एक दूसरा भगवान् चाहिये।

ठा० अभ्यु०—और तो सब समझ में आ गया, परन्तु एक कठिन बात है। सभा सोसायटी में मिलनेवाले के लिए मांस से बचना कठिन है। लोग बनाने लगते है।

चन्द्र०—कुछ कठिन नहीं, कठिनाई उनके लिए है, जिनका आत्मा निर्बल है, किसी दुर्गुण को मिटाने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि उसके विरुद्ध प्रचार करने में लज्जा मत करो। यदि कई लोग ऐसे हो जाएँ जो मांस खाना छोड़ दें तो सब सोसायटियों में मांस परोसना बन्द हो जाए। ऐसा हुआ भी है। कुछ जातियों में पहले शादी विवाह और दावतों में मांस अवश्य होता था, परन्तु अब खुली दावतों में मांस का रिवाज उठता जाता है। पहले तो मांस न खानेवाले मांस

Scanned by CamScanner

खानेवालों के सामने शरमा जाते थे, क्योंकि शासक लोग प्रायः मांसाहारी थे। यह फैशन है कि जो बड़े लोग करते हैं, उसी का अनुकरण छोटे भी करने लगते हैं और उनको साहस नहीं होता कि बड़ों के सामने मुँह खोलें, परन्तु धर्म पर चलने के लिए साहस भी चाहिए। बिना साहस के मनुष्य धर्मात्मा नहीं हो सकता। साहस कीजिये। दो चार बार कठिनाई पड़ेगी फिर सब्र हो जायेगा।

मु०—खाने पीने में क्या रखा है। यह तो वैयक्तिक प्रश्न है। हमारा दुर्भाग्य है कि हम खाने-पीने की चीजों पर लड़ते हैं। मैं जो खाऊँ, जो पिऊँ, सोसायटी को इससे मतलब! मनुष्य को स्वतन्त्र छोड़ना चाहिए।

चन्द्र०—जिस काम से समाज भर को हानि पहुँचती हो, उसको वैयक्तिक कहना बड़ी भूल है। क्या एक व्यक्ति को अधिकार है कि दूसरे व्यक्ति को खा जाए या समाज की अवस्था ऐसी कर दे कि उसके पास खाने के लिए कुछ न रहे? जिस भारतवर्ष में किसी समय दूध की नदियाँ बहती थीं वहां एक-एक प्याले दूध के लिए लोग तङ्ग हो रहे हैं। दूध के स्थान पर मांस ले लो। करोड़ों पशु रोज काटे जाएँ, फिर भी यह समाज को चाहिए कि शासन द्वारा उन व्यक्तिगत प्रश्न ही रहे? नहीं। व्यक्तियों पर अभियोग चलाये जाए जो मांस-भक्षण करके समाज को इतनी हानि पहुँचाते हैं और जिन्होंने देश भर को बूचड़खाना बनाया हुआ है, परन्तु जब समस्त समाज के प्रभावशाली लोग स्वयं ही किसी दुर्व्यसन में पड़े हों तो कौन किसको रोके? वैयक्तिक स्वतन्त्रता केवल उन बातों में ही हो सकती है, जिनका समाज के दूसरे सदस्यों पर प्रभाव न पड़ता हो। व्यक्तियों को यह तो स्वतन्त्रता है कि वह आलू खाएँ या लौकी, परन्तु यह स्वतन्त्रता नहीं होनी चाहिए कि वह इस प्राणी की जान लें या उसकी और हम देखते हैं कि सभ्य समाजों ने अपने व्यक्तियों को इस प्रकार की स्वतन्त्रता देना स्वीकार नहीं किया। मांस खाने की स्वतन्त्रता केवल इस लिए है कि उन्होंने इस दृष्टिकोण से कभी विचार ही नहीं किया और सजीवों को सजीव समझा ही नहीं। इस अंश में वह सभ्य होते हुए भी असभ्य हैं। किन्हीं अंशों में उन्नतिशील हो जानेपर भी वह अपने पुराने दुर्गुणों को सर्वथा भूले नहीं है।

मुकर्जी०—माना कि मांस-भक्षण से हिंसा होती है और यह भी

Scanned by CamScanner

माना कि यदि मांस न खाया जाए तो अच्छा है, परन्तु क्षुद्र जीवों के हित के लिए मनुष्य जैसी उत्कृष्ट जाति के हितों की उपेक्षा ठीक नहीं। दो-चार दस-बीस बकरे मर गये तो क्या हुआ? हजार दो हजार मुर्गों की जान गई तो क्या? मनुष्यों को तो इससे सुख मिलता है। एक अल्प मूल्य वस्तु को खो कर यदि बहुमूल्य वस्तु प्राप्त हो जाए तो हानि क्या? मनुष्य रत्न के समान है, पशु-पक्षी कौड़ियों के समान! एक राजा की जान बचाने के लिए सैकड़ों सिपाहियों की जान सङ्कट में डाल देते हैं।

चन्द्र०—आपकी यह युक्ति ठीक नहीं। मनुष्य की उत्कृष्टता इसलिए नहीं है कि वह अधिक पशुओं को खा सकता है, अपितु इसलिए कि वह अधिक पशुओं की रक्षा कर सकता है। यह ठीक है कि एक धर्मात्मा राजा की जान बचाने के लिए हजारों सिपाही अपनी जान पर खेल जाते हैं, परन्तु यदि कोई राजा निरपराध दो चार सिपाहियों को भी मार डाले तो ऐसे दुष्ट राजा की जान बचाने के लिए कोई सिपाही तैयार न होगा। यदि कोई ऐसी परिस्थिति आ जाए कि हम को या तो एक मनुष्य की जान खोनी पड़े या एक गाय की और दोनों का बचाना असम्भव है तो हम मनुष्य की जान पहले बचावेंगे। इसका यह अर्थ नहीं कि उस मनुष्य को खुली छुट्टी दे दें कि वह अपने कल्पित सुख के लिए पशुओं को मारा करे। कभी-कभी डॉक्टर लोग बच्चे को मार कर जच्चा की जान बचा लेते हैं, परन्तु इससे डॉक्टरों को बच्चे मारने की आज्ञा तो नहीं दी जा सकती। विशेष परिस्थियियों में विशेष नियम बनाये जाते हैं, परन्तु उनसे सामान्य व्यवहार में कोई भेद नहीं पड़ता। मांस-भक्षण के लिए कोई विशेष परिस्थिति नहीं। यह तो एक भयानक सामाजिक दुर्व्यसन है, जिसने मनुष्य को मानवतल से गिराकर भेड़िया और चीता बना दिया है। उपयोगी पशुओं की कमी, दूध दही और भोज्य पदार्थों की कमी, दयाभाव और सौजन्य की कमी, आत्मिकबल की कमी, स्वास्थ्य और वर्चस का ह्रास, इन्द्रिय-विलास और लोलुपता की उन्नति। कहाँ तक बतावें सहस्त्रों हानियां इस मांस-भक्षण के कारण हो रही हैं। यदि मांस-भक्षण दूर हो जाए तो बहुत से सुधारों के लिए मार्ग साफ हो जाए?

लाला तसल्लीरामजी—श्री पं० चन्द्रदेवजी! आपके हम सब बड़े कृतज्ञ हैं कि आपने यह विवेकपूर्ण वार्त्ता हमारे सामने रखी। मुझे

Scanned by CamScanner

विश्वास हो गया कि मांस-भक्षण बुरा है।

ठा० अभ्युदयसिंहजी—मैंने तो प्राण कर लिया है कि कभी मांस को घर में भी न आने दूँगा।

मौलवी कबीर बख्शजी—असर तो मेरे ऊपर भी बहुत हुआ है। क्या ही अच्छा होता कि मुसलमानों में गोश्त का रिवाज न होता। हिन्दू-मुस्लिम एकता में फिर कोई भी बाधा न पड़ती। न हम गाय खाते, न हिन्दू लोग सुअर! सबको सबका हित होता।

सेठ लल्लूमलजी—पं० चन्द्रदेवजी बड़े विद्वान् हैं, पण्डितजी हमने तो मांस कभी नहीं खाया, परन्तु हमने मांस के विरोध में ऐसी अकाट्य युक्तियाँ कभी नहीं सुनी थीं। मैं चाहता हूँ कि इन विचारों का जोर से प्रचार किया जाए।

श्री मुकर्जी बाबू—हम भी इस बात को मानते हैं। अब हम भी मांस छोड़ देंगे।

पं० चन्द्रदेवजी—मैं आप सबको बहुत धन्यवाद देता हूँ कि आपने मेरी बातों को धैर्य और सौजन्य से सुना! यदि हमारे इस वादप्रतिवाद से पशुओं की जान बच सके और मनुष्य जाति अधोगति को छोड़कर उन्नतिशील और सभ्य हो सके तो हम समझेंगे कि हमारा परिश्रम सफल हुआ।

परमात्मा हम सबको सद्बुद्धि प्रदान करे।

नमस्ते!

(सब मिलकर) नमस्ते, नमस्ते।

Scanned by CamScanner

लेखक परिचय

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय विश्वप्रसिद्ध लेखकों व विद्वानों में से एक थे। आप इस युग के वैदिक विद्वानों में एक निराली विभूति थे। आपने चार भाषाओं में अत्यन्त मौलिक व रोचक साहित्य दिया। गद्य में लिखा, पद्य में लिखा। धर्म, दर्शन, इतिहास, जीवनी आदि कई विषयों पर आपने लिखा। जब कभी किसी विषय पर लेखनी उठाने की उमंग पैदा हुई तो ग्रन्थ रचकर ही चैन लिया।

आप एक आदर्श पुत्र, आदर्श शिक्षक, महान् विचार सुधारक, पूज्य नेता, आदर्श पिता, मानव निर्माण कला के चतुर शिल्पी व लोक प्रिय साहित्यकार थे। आपने देश को कई जाने माने साहित्यकार व समाज सेवी दिये। आप आपनी पत्नी की जीवनी लिखने वाले विश्व के प्रथम प्रख्यात साहित्यकार हैं।

आपके प्रकाशित ग्रन्थों व लेखों की पृष्ठ संख्या लाखों तक पहुँचती है। आपको एक ही विषय पर यदि बीस बार भी लिखना पड़ा तो हर बार नई शैली से, नई सामग्री दी। आप अल्पायु में ही अनाथ हो गये। अपने तपोबल से महान् बने-महामानव बने।

सन् १८८१ में जन्मे श्री उपाध्याय जी ने सन् १९६८ में नश्वर देह का परित्याग किया। पूरे सत्तर वर्ष साहित्य की व समाज की अथक सेवा की।

आवरण : श्रीमहालक्ष्मी: ०११-६५८४५५११, ९३१३७८४२७२

Scanned by CamScanner